संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२८ ● : संयुक्तांक ४७-४८ ● २३ एवं ३० नवम्बर, २०२३ (गुरुवार) मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष तृतीया सम्वत् २०८० ● दयानन्दाब्द १६६ वेद व मानव सृष्टि सम्वत्:१६६०८५३१२४

महर्षि देव दयानंद ने हिंदुओं में फैले अंधविश्वास, जातिवाद, छुआछूत आदि पर प्रबल प्रहार किये–देवेन्द्रपाल वर्मा

महर्षि दयानंद सरस्वती द्विजन्म शताब्दी समारोह मेरठ का भव्य समापन

महर्षि दयानंद सरस्वती द्विजन्म शताब्दी समारोह मेरठ में विशाल शोभा यात्रा के शुभारंभ के अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्रपाल वर्मा जी ने उपस्थित आर्य समुदाय को संबोधित करते हुए कहा कि-महर्षि दयानंद सरस्वती के समय भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। सामाजिक व धार्मिक अंधविश्वासों के बंधनों में छटपटा रहा था। हिंदू जाति अनेक कुरीतियों का शिकार तो थी ही, मुस्लिम मुस्लिम व ईसाई षड्यंत्र करके उन्हें मत्तांतरित कर रहे थे। उसपर कोढ़ में खाज, मूर्ति पूजा, अवतारवाद जन्मना जाति प्रथा, छुआछूत, तंत्र-मंत्र, फलित

ज्योतिष आदि अनेकों कु प्रथाओं ने जकड़ रखा था। मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले अनेक ठेकेदार पंडा, पुजारी, महंत, मठाधीश, बरगला कर लूटने में लगे थे। ऐसे समय में महर्षि दयानंद का आगमन मानो 'ईश्वर के दूत' के रूप में आए। महर्षि देव दयानंद ने हिंदुओं में पहले अंधविश्वास, जातिवाद, छुआछूत आदि पर प्रबल प्रहार किये। उन्होंने इन सब का खंडन वेदों व अकाट्य तर्कों के आधार पर किया। लुप्त हो चुके वेद, ज्ञान को पुनः स्थापित किया। 'कृण्वन्तो विश्वमूआर्यम्' को चरितार्थ करने के उद्देश्य से सन् १८७५ ई० में मुंबई में आर्य समाज की स्थापना की। जिसमें महर्षि के सिद्धांतों व विचारों का प्रचार प्रसार होने लगा और देश-विदेश में हजारों आर्य समाजों कि स्थापना हुई। आज पूरा विश्व महर्षि दयानंद सरस्वती की दूसरी जन्म शताब्दी मना रहा है। हम समस्त आर्यजन एवं विश्व इस शताब्दी के प्रत्यक्ष गवाह है। महर्षि के सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार के लिए मैं समस्त आर्य बन्धुओं का आह्वान करता हूं कि अपने-अपने भवनों से बाहर निकाल कर वैदिक धर्म के प्रचार के लिए हुंकार भरें, आज देश, समाज व परिवार को आपकी जरूरत है।

प्रातः राष्ट्र भृत यज्ञ स्वामी विवेकानंद सरस्वती प्राचार्य गुरुकुल प्रभात आश्रम के ब्रह्मत्व में किया गया। तत्पश्चात महाराणा प्रताप प्रांगण, जिमखाना मैदान से विशाल शोभायात्रा का शुभारंभ आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्रपाल वर्मा द्वारा किया गया। शोभा यात्रा में आर्य वीर गुरुकुलों के ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी आर्य

थे। समस्त कार्यक्रमों की अध्यक्षता स्वामी विवेकानंद सरस्वती जी ने की। आमंत्रित विद्वतगण स्वामी आर्यवेश जी, श्री माया प्रकाश त्यागी डा. ज्वलन्त कुमार शास्त्री, डा. आचार्य पुनीत शास्त्री आचार्य, बालकृष्ण, डा. वाचस्पति मिश्रा, डा. सुकामा आर्या, आचार्य, डा. प्रियवन्दा वेद भारती, डा. जयेंद्र कुमार, डा. सविता आचार्या, प्रमोद शास्त्री आदि थे।

समारोह में डा. आर.पी. चौधरी प्रधान, श्री राजेश सेठी मंत्री, श्री चंद्रकांत जी मुख्य संयोजक, श्री सुनील आर्य कोषाध्यक्ष, श्रीमती स्वाति शेखर-स्वागताध्यक्ष आदि की गरिमामई उपस्थिति रही।

शोभा यात्रा के संयोजक श्री हरवीर सुमन जी तथा श्री रामपाल सिंह जी सह संयोजक थे।

वेदामृतम्

श्रीणामुदारो धरुणो रयीणां, मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः।
वसुः सूनुः सहसो अप्सु राजा'', विभात्यग्र उषसामिधानः।।

ऋ० १०.४५.५

आओ, हम 'अग्नि' राजा की, तेजोमय प्रभु-राजा की, शरण में जायें। वह राजा कैसा है, उसकी कैसी निराली शान है, वह अपनी प्रजा को क्या देता है, यह भी वेद के शब्दों में सुन लें। वह साधक के अन्दर श्री को अर्थात् आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक परम शोभा को उत्पन्न करनेवाला है। वह ऐश्वयों का, समस्त स्पृहणीय धन-सम्पत्तियों का, धारण करनेवाला है। जव मनुष्य के कुसंगति आदि में पड़ जाने से उसके पास से एक-एक करके सत्य-अहिंसा आदि सम्पत्तियाँ बिखरने लगती हैं, तव वह उसे जागरूक करके उसकी उन सम्पत्तियों का धारक बनता है। वह मानव की भौतिक सम्पत्ति को भी उसके पास धृत रखने में निमित्त वनता है, उसे दरिद्र नहीं होने देता। वह मनीषाओं का, मन की अभीप्साओं का, स्फुरणों का, प्रतिभाओं और बुद्धियों का प्रकृष्ट दाता है। वह 'सोमगोपा' है, आत्मारूपी सोम का रक्षक है। साथ ही वह 'सोम' शब्द से सूचित होनेवाली सौम्यता, समस्वरता, अन्तः प्रेरणा, शान्ति, ज्ञान की अमृतमयी धारा आदि का भी रक्षक है। वह 'वसु' है, उजड़ते हुए को बसानेवाला है, बसे हुए के निवास को दृढ़ करनेवाला है। वह 'सहस्' का 'सूनु' है, साहस, मनोबल, आत्म-बल आदि का पुत्र या पुतला है।

अन्धकार को विच्छिन्न करने वाली चमकीली उषाएँ प्राची में प्रतिदिन उदित होती हैं, क्या ये स्वयं अपनी शक्ति से चमक रही हैं, नहीं? इन्हें चमकानेवाला वही अग्नि-स्वरूप परमेश्वर है। सूक्ष्म आँख से देखने पर वही अपनी दिव्य चमक से चमकता हुआ- उषाओं के आगे-आगे चलता है। और, अन्तरिक्षस्थ जलों में जो विद्युत् विद्योतितं होती है वह भी जल की अपनी द्युति नहीं है, परमात्माग्नि ही विद्युत् को भी भासमान कर रहा है। उपनिषद् के ऋषि ने ठीक कहा है-''न उसके सम्मुख सूर्य अपनी कुछ चमक रखता है, न चाँद तारे कुछ चमक रखते हैं, न बिजलियाँ कुछ चमक रखती हैं, न भौतिक अग्नि चमक रखती है। उस । उसी की चमक में से थोड़ी-सी चमक लेकर ये सब चमक रहे हैं, उसी की आभा से यह जगत् भासमान है, 'तस्य भासा सर्वमिदं विभाति' । आओ, उषायों और विद्युतों के आगे चमकनेवाले उस राजा से हम भी थोड़ी-सी चमक प्राप्त कर लें।

साभार-वेदमंजरी

आर्य समाज में 41 मजदूरों के टनल से सकुशल बाहर निकालने के लिए हवन करके प्रार्थना की गई।

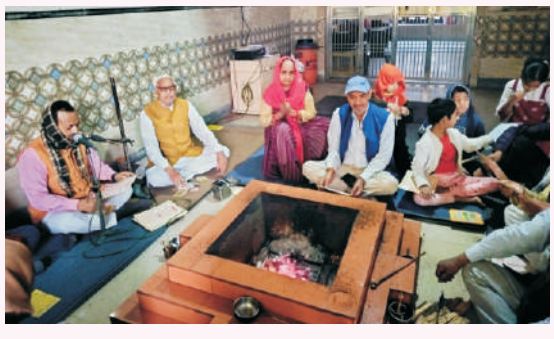

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पूरे देश से आवाहन किया था कि मजदूरों के सकुशल बाहर निकालने के लिए प्रार्थना करें। इस परिपेक्ष में आज प्रातः आर्य समाज शिवपुरी खतौली के द्वारा मजदूरों को सुरक्षित बाहर निकालने के लिए हवन किया गया। सब ने मिलकर वेद मंत्रों के माध्यम से परमात्मा से प्रार्थना की। हवन में आर्य समाज के जिला प्रधान सत्येंद्र आर्य प्रधान, जगदीश सिंह, अजेश आर्य, सुरेश फौजी, अनिल कश्यप, दिनेश आर्य, मास्टर जयपाल सिंह, भगवान सिंह, रामानंद आर्य, अमरीश कौशिक, रामशरण आर्य उपस्थित रहे। यजमान शोभाराम आर्य पत्नी सहित रहे। इस अवसर पर खीर द्वारा बलि वैश्य यज्ञ भी किया गया।

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

पंकज जायसवाल
मंत्री/सम्पादक

आर्य शिवशंकर वैश्य
प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

कर्म फल व्यवस्था

संसार में ऐसे बहुत से लोग मिलते हैं, जो अपना दोष नहीं देखते, बल्कि दूसरों पर ही दोष लगाते रहते हैं। और अनेक बार तो झूठे आरोप भी लगाते रहते हैं।

जब वे इस प्रकार का दुर्व्यवहार करते हैं, तो उनके दुर्व्यवहार से दूसरे व्यक्ति को कितनी चोट लगती है, कितना कष्ट होता है, इस बात का अनुभव उन्हें सामान्य रूप से नहीं होता। ''इसका अनुभव तो उन्हें तब होता है, जब कोई दूसरा व्यक्ति उनके साथ इस प्रकार का दुर्व्यवहार करता है।'' ''अर्थात जब वे निर्दोष हों, और कोई दूसरा व्यक्ति उन पर झूठा आरोप लगाए, तब उन्हें पता चलता है, कि जिस व्यक्ति पर झूठा आरोप लगाया जाता है, उस व्यक्ति को कितना कष्ट होता है।''

''इसलिए न तो किसी पर कोई झूठा आरोप लगाना चाहिए, और न ही किसी दुखी या परेशान व्यक्ति को देखकर उसकी खिल्ली उड़ानी चाहिए। उससे घृणा नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसके प्रति सहानुभूति रखनी चाहिए। उसकी समस्या को समझने का प्रयास करना चाहिए। उसकी समस्या को यथाशक्ति दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।'' ''यदि आप ऐसा करेंगे, तो आपको बहुत पुण्य मिलेगा, बहुत शांति मिलेगी, जो कि बाजार में बहुत धन खर्च करने पर भी नहीं मिलती।''

इसी प्रकार से गाय कुत्ता बकरी मुर्गी आदि जो प्राणी हैं, इनमें भी बिल्कुल वैसी ही आत्मा है, जैसी आपके अंदर है। ''इसलिए इन प्राणियों पर भी अत्याचार नहीं करना चाहिए, बल्कि इनकी रक्षा करनी चाहिए। इससे भी आपको बहुत अधिक पुण्य मिलेगा और शांति मिलेगी।'' इस पुण्य का अगले जन्म में बहुत अच्छा फल मिलता है. ''यदि आप अन्य दुखी परेशान मनुष्यों पर अथवा पशु पक्षियों पर अन्याय अत्याचार करेंगे, तो हो सकता है, आपको भी अगले जन्मों में पशु पक्षी आदि योनियों में दंड भोगना पड़े।''

''निस्संदेह ईश्वर बहुत दयालु है, परन्तु यह भी याद रहे, कि वह उतना ही कठोर भी है। उसकी दयालुता को भी ध्यान में रखें और कठोरता को भी।'' ''वह अच्छे कर्म का अच्छा फल देता है, और बुरे कर्म का बुरा। किसी को भी थोड़ा सा भी माफ नहीं करता।'' ''यह बात सदा ध्यान में रखें, तभी कोई कर्म करें।''

''मनुष्य अकेला नहीं जी सकता, क्योंकि वह अल्पज्ञ और अल्पशक्तिमान है। ठीक प्रकार से या सुख पूर्वक जीवन जीने के लिए उसे अनेक लोगों का सहयोग लेना पड़ता है।'' ''दूसरे लोगों का सहयोग मिलने पर व्यक्ति का जीवन सरल हो जाता है। इससे उसकी अनेक समस्याएं सुलझ जाती हैं, और अनेक प्रकार से उसे सुख मिलता है।'' ''संसार में जो दूसरे लोग उसे सहयोग करते हैं, वे क्यों करते हैं? क्योंकि उनका उसके साथ कुछ न कुछ संबंध होता है।''

मान लीजिए, ईश्वर ने आपको किसी एक परिवार में जन्म दिया। ''जन्म के साथ ही आपका बहुत लोगों के साथ संबंध भी बना दिया। जैसे माता पिता भाई-बहन चाचा चाची मामा मामी बुआ फूफा मौसी मौसा इत्यादि।'' ''उक्त सभी संबंधी लोग उस व्यक्ति की समस्याओं को सुलझाते रहते हैं। उसके दुखों को दूर करते रहते हैं, और अनेक प्रकार से उसे सुख देते रहते हैं।'' ''ईश्वर ने इसी प्रयोजन से जन्म से ही ये सारे संबंध बनाए थे।''

इसके अतिरिक्त व्यक्ति धीरे-धीरे बड़ा होता है। वह स्कूल कॉलेज गुरुकुल आदि में जाने लगता है। ''वहां भी कुछ दूसरे मनुष्यों के साथ उसके संबंध बन जाते हैं, उन्हें मित्रता का संबंध कहते हैं। आगे चलकर पति-पत्नी का भी संबंध बनता है।'' ''इन संबंधों को ईश्वर नहीं बनाता, वे तो आपने अपनी इच्छा और पसंद से बनाए हैं।'' ''ये सारे संबंध एक दूसरे की समस्याओं को सुलझाने तथा एक दूसरे को सुख देने के लिए होते हैं।''

ईश्वर का अभिप्राय भी यही था, कि ''ये सब संबंधी लोग परस्पर एक दूसरे को सुख देवें, और उनके दुखों को दूर करें।''

''परंतु संसार में सब लोगों के संस्कार एक जैसे नहीं होते। कुछ लोगों के संस्कार अच्छे होते हैं, और कुछ लोगों के बुरे। वे अपने-अपने संस्कारों से प्रेरित होकर व्यवहार करते हैं।'' ''जिनके संस्कार अच्छे होते हैं, वे दूसरे संबंधी लोगों को सुख देते हैं। और जिनके संस्कार खराब होते हैं, वे अपने संबंधी लोगों को दुख देते हैं। अनेक प्रकार से उनका शोषण करते हैं। उन्हें धोखा देते हैं, छल कपट से उनकी संपत्तियां भी हड़प लेते हैं। ऐसा करना अत्यंत ही अनुचित कार्य है।'' ''ईश्वर न्यायकारी है। वह ऐसे दुष्ट लोगों को इस जन्म में भी मानसिक तनाव आदि देकर तथा अगले जन्म में भी पशु-पक्षी कीड़ा मकोड़ा वृक्ष वनस्पति आदि योनियों में जन्म देकर अवश्य ही दंडित करता है।''

''यदि कर्म फल की इस व्यवस्था को संसार के लोग समझ लें, और सबके साथ ठीक ठीक न्यायपूर्वक व्यवहार करें। संबंधों के सही उद्देश्य को ध्यान में रखकर एक दूसरे की समस्याओं को सुलझाएं, और उन्हें सुख देवें, तो यह संसार स्वर्ग बन जावे।''

''परंतु संसार में लोगों के व्यवहार को देखने से ऐसा लगता नहीं है, कि यह संसार कभी स्वर्ग बन पाएगा।'' ''फिर भी यथाशक्ति सबको प्रयत्न तो करना ही चाहिए। जितनी मात्रा में भी स्वर्ग बन सकता है, उतना तो बनाएं!'' ''एक दूसरे पर अन्याय करके, उनका शोषण करके, कम से कम इसे नरक तो न बनाएं!!!''

-स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक की कलम से

गतांक से आगे.....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ त्रयोदश समुल्लास

अथ कृश्चीनमत विषयं व्याख्यास्यामः

जबूर का दूसरा भाग

काल के समाचार की पहली पुस्तक

योहन रचित सुसमाचार

(समीक्षक) अब देखिये इन दूतों की कथा ! जो पुराणों वा भाटों की कथाओं से भी बढ़ कर है ।। ११३।।

११४-और लोगों के समान एक नर्कट मुझे दिया गया और कहा गया कि उठ! ईश्वर के मन्दिर को और वेदी को और उसमें के भजन करनेहारों को -यो० प्र० प० ११। आ० १।।

(समीक्षक) यहां तो क्या परन्तु ईसाइयों के तो स्वर्ग में भी मन्दिर बनाये और नापे जाते हैं। अच्छा है, उनका जैसा स्वर्ग वैसी ही बातें हैं। इसीलिए यहां प्रभुभोजन में ईसा के शरीरावयव मांस लोहू की भावना करके खाते पीते हैं और गिर्जा में भी क्रूश आदि का आकार बनाना आदि भी बुतपरस्ती है।।११४।।

११५-और स्वर्ग में ईश्वर का मन्दिर खोला गया और उसके नियम का सन्दूक उसके मन्दिर में दिखाई दिया। -यो० प्र० प० ११। आ० १९।।

(समीक्षक) स्वर्ग में जो मन्दिर है सो हर समय बन्द रहता होगा। कभी-कभी खोला जाता होगा। क्या परमेश्वर का भी कोई मन्दिर हो सकता है?

जो वेदोक्त परमात्मा सर्वव्यापक है उसका कोई भी मन्दिर नहीं हो सकता। हां ! ईसाइयों का जो परमेश्वर आकारवाला है उसका चाहे स्वर्ग में हो चाहे भूमि में और जैसी लीला टं टन् पूं पूं की यहां होती है वैसी ही ईसाइयों के स्वर्ग में भी। और नियम का सन्दूक भी कभी-कभी ईसाई लोग देखते होंगे। उससे न जाने क्या प्रयोजन सिद्ध करते होंगे? सच तो यह है कि ये सब बातें मनुष्यों को लुभाने की हैं। ११५।।

११६-और एक बड़ा आश्चर्य स्वर्ग में दिखाई दिया अर्थात् एक स्त्री जो सूर्य पहिने है और चांद उसके पांवों तले है और उसके सिर पर बारह तारों का मुकुट है ।। और वह गर्भवती होके चिल्लाती है क्योंकि प्रसव की पीड़ा उसे लगी और वह जनने को पीड़ित है। और दूसरा आश्चर्य वर्ग में दिखाई दिया और देखा एक बड़ा लाल अजगर है जिसके सात सिर और एस सी हैं और उसके सितं पर सात राजमुकुट हैं। और उसकी पूछने आकाश के तारों की एक तिहाई को खोच के उन्हें पृथिवी पर डाला।।

(समीक्षक) अब देखिये लम्बे चौड़े गपोड़े। इनके स्वर्ग में भी विचारी स्त्री चिल्लाती है। उसका दुःख कोई नहीं सुनता, न मिटा सकता है। और उस अजगर की पूंछ कितनी बड़ी थी जिसने एक तिहाई तारों को पृथिवी पर डाला? चला। पृथिवी तो छोटी है और तारे भी बड़े-बड़े लोक हैं। इस पृथिवी पर एक भी नहीं समा सकता। किन्तु यहां यही अनुमान करना चाहिये कि ये तारों की तिहाई इस बात के लिखने वाले के घर पर गिरे होंगे और जिस अजगर की पूछ इतनी बड़ी थी जिससे सब तारों की तिहाई लपेट कर भूमि पर गिरा दी वह अजगर भी उसी के घर में रहता होगा।।११६।।

११७-और स्वर्ग में युद्ध हुआ मौखायेल और उसके दूत अजगर से लड़ और अजगर और उसके दूत लड़े।। यो० प्र० १० १२० प्रा० ७।।

(समीक्षक) जो कोई ईसाइयों के स्वर्ग में जाता होगा वह भी लड़ाई में दुःख पाता होगा। ऐसे स्वर्ग की यहीं से आशा छोड़ हाथ जोड़ बैठ रहो। जहां शान्तिभंग और उपद्रव मचा रहे वह ईसाइयों के योग्य है ।।११७।। ११८-और वह बड़ा अजगर गिराया गया। हां। वह प्राचीन सांप जो दियाबल और शैतान कहावता है जो सारे संसार का भरमानेहारा है।

-थी० प्र० ५० १२। आ० ९।।

क्रमशः अगले अंक में...

दयानन्द शास्त्रार्थ प्रश्नोत्तर-संग्रह

कबीर पन्थ

(कबीर पन्थी साधु के साथ मसूदा में धर्मचर्चा--अगस्त, १८८१)

सन् १८८१ के पहले सप्ताह में एक दिन एक साधु कबीरपंथी ब्यावर से स्वामी जी के पास मसूदा में आया और परस्पर धर्मचर्चा होने लगी ।

स्वामी जी - आपके मत के कितने ग्रन्थ हैं ?

साधु जी - हमारे २४ करोड़ पुस्तक हैं । स्वामी जी-यह बात मिथ्या है क्योंकि इतने ग्रन्थों की संख्या और रखने को कितना स्थान चाहिए (इस पर भी साधु जी कुछ न बोले) ।

तब स्वामी जी ने फिर कहा कि तुम्हारे कबीर कौन थे और जव तुम 'इस शास्त्रार्थ का लेखरामलिखित विस्तृत विवरण पृ २४१ पर भी है। कवीरमत में होते हो तब उनकी प्रशादी और गुरु का उच्छिष्ट भी खाते हो कि नहीं ?

साधु जी-उच्छिष्ट खाते हैं। कबीर का जन्म नहीं है, अजन्म है। उसके माँ बाप भी नहीं।

स्वामी जी कबीर जी काशी में कुकर्म से उत्पन्न हुए थे। इस कारण उसकी माँ ने उसे बाहर फेंक दिया था। उसी समय वहां पर (जहाँ पर कबीर पड़ा था) एक मुसलमान जुलाहा आ निकला। वह कबीर को उठाकर घर ले गया और अपना पुत्र सा जान उसको पाला और बड़ा किया। अव देखिये कि उसका जन्म भी हुआ और माँ बाप भी ठहरे।

साधु जी इस बात को सुनकर चुप रहे और कुछ उत्तर न दिया फिर और विषय पर बातें होती रहीं । (देश हितैषी, खंड १, संख्या ८ पृष्ठ ६, ७)

(लेखराम पृष्ठ ५४६)

मूर्तिपूजा और ऋषि दयानन्द

आचार्य डॉ. धर्मवीर आर्य

मूर्ति शब्द प्रतिमा या साकार वस्तु के अर्थ में प्रचलित है। संस्कृत में मूर्त शब्द व्यक्त होने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसका दूसरा अर्थ निराकार से साकार होना है। संसार में दो प्रकार की सत्ताएँ दृष्टिगोचर होती हैं- एक चेतन और दूसरी अचेतन। ऋषि दयानन्द की मान्यता के अनुसार दो चेतन सत्तायें स्वरूप से अनादि और पृथक्-पृथक् हैं। एक अचेतन सत्ता प्रवाह से अनादि और एक है। दूसरी चेतन सत्ता के रूप में जीव और ईश्वर दोनों निराकार हैं और एक अचेतन सत्ता प्रवाह से अनादि होने के कारण कभी व्यक्त और कभी अव्यक्त होती है। इसी को संसार के रचना काल में व्यक्त और प्रलय काल में अव्यक्त दशा में बताया है। इस प्रकार संसार ही कभी मूर्त व्यक्त और कभी अमूर्त अव्यक्त दशा में होता है। इसी अर्थ में उपनिषद् ग्रन्थों में मूर्तंच-अमूर्तंच इसका प्रयोग दिखाई देता है। संस्कृत साहित्य में मूर्त शब्द का अनेकार्थ प्रयोग पाया जाता है। अमरकोष तृतीय काण्ड नानार्थ वर्ग- ३ श्लोक ६६ में मूर्ति शब्द का अर्थ बताते हुए कहा गया है- मूर्तिः काठिन्यकाययोः । -अर्थात् मूर्ति शब्द का प्रयोग कठोरता और काया-शरीर के अर्थ में पाया जाता है। मूर्ति शब्द का अर्थ है- आकार वाली वस्तु। इस प्रकार सोना, चाँदी, पीतल, लोहा, मिट्टी आदि से बनी साकार वस्तु मूर्ति कहलाती है।

एक साकार वस्तु से दूसरी साकार वस्तु की तुलना प्रतिमा कही जाती है। संस्कृत में प्रतिमा शब्द का मूल अर्थ बाट है। जिससे वस्तु को तोला जाता है, उस साधन को प्रतिमा कहा जाता है। एक वस्तु की दूसरी वस्तु से तुलना अनेक प्रकार से होती है- रूप से, भार से, योग्यता से बहुत प्रकार से किन्हीं दो वस्तुओं के बीच समानता देखी जा सकती है। यह तुलना जड़ पदार्थों में ही सम्भव है। साकार से साकार की प्रतिमा हो सकती है। निराकार से साकार प्रतिमा की रचना सम्भव नहीं है, इसलिए साकार व्यक्ति, वस्तु आदि की प्रतिमा बन सकती हैं। एक समान आकृति को देखकर दूसरी समान ओंति का बोध होता है, जैसे चित्र को देखकर व्यक्ति का या व्यक्ति को देख कर चित्र और व्यक्ति की समानता का ज्ञान होता है। ईश्वर के समान कोई नहीं, इसलिए वेद कहता है-

न तस्य प्रतिमा अस्ति। -यजु. ३२/३ ।।

आगे चलकर समानता के कारण मूर्ति के लिए भी प्रतिमा शब्द का प्रयोग होने लगा। आज प्रतिमा शब्द से मूर्ति का ही अर्थ ग्रहण किया जाता है।

संसार मूर्त है, इसलिए इसमें मूर्तियों का अभाव नहीं है। साकार पदार्थों से बहुत सारे दूसरे साकार पदार्थ बनाये जाते हैं, स्वतः भी बन सकते हैं, अतः मूर्ति कोई विवाद या विवेचना का विषय नहीं है। मूर्ति के साथ जब पूजा शब्द का उपयोग किया जाता है, तब अर्थ में सन्देह उत्पन्न होता है। पूजा शब्द सत्कार, सेवा, आदर, आज्ञा पालन, रक्षा आदि के अर्थ में प्रयुक्त होता है। पूजा शब्द का उपयोग जब-जब पदार्थों के प्रसंग में किया जाता है, तो सन्देह की स्थिति उत्पन्न होती है। यज्ञ शब्द का प्रयोग अग्निहोत्र के लिए किया जाता है, जिसका अर्थ देवपूजा भी है। वेद में जड़ पदार्थों को भी देवता कहा है। इसी क्रम में चेतन को भी देव कहा गया तथा परमेश्वर को महादेव कहा गया। इस प्रकार देव शब्द से साकार और निराकार तथा जड़ और चेतन दोनों प्रकार के पदार्थों का ग्रहण होने लगा। इनमें एक के मूर्त होने से दूसरे के मूर्त होने की सम्भावना बन जाती है। मूर्त पदार्थों में जड़ और चेतन दोनों पदार्थ देवता की श्रेणी में आते हैं- पहले अग्नि, वायु, जल आदि, दूसरे माता-पिता, आचार्य, अतिथि आदि। इस प्रकार देव शब्द की समानता से पूजा की समानता जुड़ती दिखाई देती है। इस तरह साकार, निराकार, जड़, चेतन में देवत्व बन गया तो सब की पूजा में भी समानता मानी व की जाने लगी।

सामर्थ्य और उपयोगिता के कारण चेतन से जिस प्रकार प्रार्थना की जाती है, उसी प्रकार जड़ से उसके सामर्थ्य के सामने विवश होकर अग्नि, वायु, जल आदि से भी प्रार्थना की जाने लगी। चेतन को भोजन, आसन, माला, सेवा, सत्कार आदि से सन्तुष्ट किया जाता है, उसी प्रकार जड़ देवता को भी सन्तुष्ट करने की परम्परा चल पड़ी। सभी देव शब्दों का मानवीकरण कर दिया, चाहे वह जड़ हो या चेतन, साकार हो या निराकार। मनुष्यों ने इन सब की मूर्ति बना ली। उन वस्तुओं के गुण उन मूर्तियों में चिह्नित कर दिये गये। ऐसा करते हुए ईश्वर का भी मानवीकरण हो गया। मानवीकरण होने में रूप और नाम के बिना उसका उपयोग नहीं हो सकता, इसलिए महापुरुषों का रूप और नाम ईश्वर की श्रेणी में आ गया। पहले दौर में शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आदि रूप देवत्व की श्रेणी में आते दिखाई देते हैं। ईश्वर के स्थान पर समाज में इन देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ पूजी जाने लगीं और इनसे ही प्रार्थना भी होने लगी। इस प्रकार इन मूर्तियों से मनुष्य के दो अभिप्राय सिद्ध हो जाते हैं- प्रथम जो उपस्थित नहीं है, वह उपस्थित हो जाता है। जिसकी मृत्यु हो चुकी है जो इस संसार से जा चुका है, उसकी स्मृति को स्थायित्व मिल जाता है तथा दूसरा अप्रत्यक्ष परमेश्वर इस मूर्ति के माध्यम से प्रत्यक्ष हो जाता है। इस प्रकार निराकार ईश्वर को साकार बनाने का विचार मूर्ति-पूजा का आधार है।

जब ईश्वर को अपनी इच्छानुरूप रूप दिया जा सकता है तो बाद के लोगों ने राम-कृष्ण के स्थान पर उनके इष्ट प्रिय व्यक्तियों को ही ईश्वर के स्थान पर मन्दिर में रख दिया। इस क्रम में मत-मतान्तरों के संस्थापक मन्दिरों के पूज्य देव बन गये। कुछ महावीर, नानक आदि ईश्वर की श्रेणी में आ गये। इसके बाद के युग में मन्दिर के महन्त, महामण्डलेश्वर, गुरु आदि लोगों की भी मूर्तियाँ बनने लगीं, उनकी भी ईश्वर के स्थान पर पूजा होने लगी। कुछ लोगों ने अपने माता-पिता, प्रियजनों को ही मन्दिर के देवताओं के स्थान पर अधिष्ठित कर दिया। उनकी पूजा को ही ईश्वर की पूजा समझने लगे। आज तो शंकराचार्य के स्थान पर आसाराम, रामरहीम, रामपाल दास जैसे कुछ पीर-फकीर भी मूर्ति के रूप में या समाधि के रूप में पूजे जाने लगे और कुछ लोग स्वयं ही अपने को पुजवाने लगे। इस तरह निराकार चेतन, सर्वव्यापक ईश्वर की यात्रा, साकार जड़ में बदल गई।

मूर्तिपूजा का समाज पर दो प्रकार से प्रभाव पड़ा। मूर्तिपूजा करने से मनुष्य कायर और भीरु बनता गया। देवता के रुष्ट होने का भय दिखाकर पुजारियों ने राजा से जनसामान्य तक को ठगा है, आज भी ठग रहे हैं। दूसरा प्रभाव समाज में मूर्तिपूजा का यह हुआ कि पुरुषार्थहीनता बढ़ी। मनुष्य के मन में इस प्रकार के विचार दृढ़ होते गये कि मनुष्य को बिना पुरुषार्थ के ही इच्छित फल की प्राप्ति हो सकती है। देवता पूजा से प्रसन्न होकर मनोवाञ्छित फल प्रदान करते हैं। इस विचार पर आर्य विचारक एवं दार्शनिक पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय ने इस प्रकार लिखा है- "वह (मूर्तिपूजक) अन्धकार में है और उसी में रहना चाहता है। वह प्रकाश का इच्छुक नहीं है। यदि आप बातचीत करके इस सम्बन्ध में उसे बतलाना चाहें तो वह बात उसे रुचिकर न होगी और वह उससे घबरायेगा। उसे भय है कि इस प्रकार की बौद्धिक छानबीन उसे अविश्वासी न बना दे और इसीलिए वह उससे बच निकलने का प्रयत्न करता है। इसका कारण यह नहीं कि वह तर्क-वितर्क की योग्यता नहीं रखता। मूर्तिपूजकों में आपको सर्वोत्तम वकील, जो चकित करने वाली तीव्र तार्किक बुद्धि रखते हैं, तर्क शास्त्र के उपाध्याय, जो सूक्ष्म हेत्वाभास को ढूँढ़ निकालने की क्षमता रखते हैं तथा चतुर राजनीतिज्ञ, जो संसार के राजनैतिक क्षेत्र में गुह्य-से-गुह्य कार्य करने वाली शक्तियों का सहज साक्षात् कर लेते हैं, मिलेंगे। उनमें आपको वाणिज्य कुशल व्यापारी, जिनकी दृष्टि से संसार की किसी मण्डी का कोई कोना छिपा हुआ नहीं है, अर्थशास्त्री जो शोषक वर्ग की चालों का सफलतापूर्वक प्रतिकार कर सकते हैं, ज्योतिष-विद्याविशारद, जिनको आकाशस्थ ग्रह-उपग्रहों का अपने ग्रह से भी कहीं अधिक परिज्ञान है तथा गणितज्ञ, जिन्हें गणित के सूक्ष्म तत्त्वों पर पूर्ण अधिकार है, भी मिल जायेंगे। ये सब बुद्धि विशेषज्ञ है, परन्तु आप इन्हें मन्दिरों में अनपढ़ लोगों के साथ वैसी ही भक्ति-भावना तथा अनिश्चित बुद्धि से मूर्तिपूजा करते देखेंगे।"

(लेखक पं. राजेन्द्र, भारत में मूर्तिपूजा, पृ. १९९) ऋषि दयानन्द के जीवन में मूर्तिपूजा के प्रति अनास्था का भाव उनके बाल्यकाल से देखने में आता है। जिस समय बालक मूलशंकर की आयु मात्र तेरह वर्ष की थी, उस समय जिस घटना ने उनके जीवन में झंझावात उत्पन्न किया, वह घटना मूर्तिपूजा से ही सम्बन्ध रखती है। महर्षि दयानन्द ने इस घटना का वर्णन अपनी आत्मकथा में इस प्रकार किया है- "जब मैं मन्दिर में इस प्रकार अकेला जाग रहा था तो घटना उपस्थित हुई। कई चूहे बाहर निकलकर महादेव के पिण्ड के ऊपर दौड़ने लगे और बीच-बीच में महादेव पर जो चावल चढ़ाये गये थे, उन्हें भक्षण करने लगे। मैं जाग्रत रहकर चूहों के इस कार्य को देखने लगा। देखते-देखते मेरे मन में आया ये क्या है? जिस महादेव की शान्त पवित्र मूर्ति की कथा, जिस महादेव के प्रचण्ड पाशुपतास्त्र की कथा, जिस महादेव के विशाल वृषारोहण की कथा गत दिवस व्रत के वृत्तान्त में सुनी थी, क्या वह महादेव वास्तव में यही है? इस प्रकार मैं चिन्ता से विचलित चित्त हो उठा। मैंने सोचा भी यदि यथार्थ में ये वही प्रबल, प्रतापी, दुर्दान्तदैत्यदलनकारी महादेव हैं तो अपने शरीर पर से इन थोड़े-से चूहों को क्यों विताड़ित नहीं कर सकते? इस प्रकार बहुत देर तक चिन्ता स्रोत में पड़कर मेरा मस्तिष्क घूमने लगा। मैं आप ही अपने से पूछने लगा कि जो चलते- फिरते हैं, खाते-पीते हैं, हाथ में त्रिशूल धारण करते हैं, डमरु बजाते हैं और मनुष्यों को श्राप दे सकते हैं, क्या यह वही वृषारूढ़ देवता हैं जो मेरे सामने उपस्थित हैं?" इस घटना के बाद बालक मूलशंकर ने पिता को जगाकर अपनी शंकाओं का समाधान कराना चाहा, सन्तोषजनक उत्तर न मिलने पर घर आकर व्रत तोड़ दिया और भोजन करके सो गया। हम देखते हैं कि यह बालक जीवन भर मूर्तिपूजा के पाखण्ड को खण्डित करता रहा। इसकी निरर्थकता बताने में जिस योग्यता और साहस को हम देखते हैं, वह उल्लेखनीय है। महर्षि दयानन्द के सामने उदयपुर के भगवान् एकलिंग की गद्दी का प्रस्ताव था, शर्त केवल एक थी- मूर्तिपूजा खण्डन छोड़ना, परन्तु महर्षि दयानन्द का उत्तर था- "मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ति करूँ अथवा ईश्वरीय आज्ञा का पालन करूँ?"

(भारत में मूर्ति पूजा, पृ. १६२) महर्षि दयानन्द ने मूर्ति पूजा के खण्डन में कभी कोई समझौता नहीं किया। इस पर पादरी के. जे. लूकस ने जो विचार दिये हैं, वे ध्यातव्य हैं। उक्त पादरी ने १८७७ में फर्रुखाबाद में मूर्ति पूजा के विषय में उनके व्याख्यान सुने थे, पादरी लूकस ने बतलाया- "वे मूर्तिपूजा के विरुद्ध इतने बल, इतने स्पष्ट और विश्वास के साथ बोलते थे कि मुझे फर्रुखाबाद की जनता की ओर से उनका हार्दिक स्वागत किये जाने पर आश्चर्य हुआ। मुझे उनका यह कथन स्मरण है कि जब मैंने उनसे कहा कि यदि आपको तोप के मुँह पर रखकर कहा जाए कि यदि तुम मूर्ति को मस्तक न झुकाओगे तो तुम को तोप से उड़ा दिया जायेगा, तो आप क्या कहेंगे? स्वामी जी ने उत्तर दिया कि 'मैं कहूँगा कि उड़ा दो' दयानन्द इतने निर्भीक थे।"

(भारत में मूर्तिपूजा पृ. १६८) महर्षि दयानन्द का मूर्तिपूजा खण्डन एक आग्रह मात्र नहीं था। उन्होंने मूर्तिपूजा की निरर्थकता सिद्ध करने में दार्शनिक, आर्थिक, सामाजिक-सभी पक्षों पर गहरा विचार किया है। जो लोग ईश्वर उपासना में मूर्तिपूजा को सहायक समझते हैं, उनके तर्कों का प्रबल तर्कों से खण्डन किया है।

प्रश्न- साकार में मन स्थिर होना और निराकार में स्थिर होना कठिन है, इसलिए मूर्तिपूजा करनी चाहिए।

उत्तर- साकार में मन स्थिर कभी नहीं हो सकता, क्योंकि उसको मन झट ग्रहण करके उसी के एक-एक अवयव में घूमता और दूसरे में दौड़ जाता है और निराकार परमात्मा के ग्रहण में मन अत्यन्त दौड़ता है तो भी अन्त नहीं पाता। निरवयव होने से चंचल भी नहीं रहता, किन्तु उसी के गुण-कर्म-स्वभाव का विचार करता-करता आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है और जो साकार में स्थिर होता तो सब जगत् का मन स्थिर हो जाता, क्योंकि जगत् में मनुष्य स्वी, पुत्र, धन, मित्र आदि साकार में फँसा रहता है, परन्तु किसी का मन स्थिर नहीं होता, जब तक निराकार में न लगावें, क्योंकि निरवयव होने से उसमें मन स्थिर हो जाता है। इसलिए महर्षि दयानन्द मूर्तिपूजा को आर्थिक हानि का कारण मानते हैं। इससे सामाजिक भ्रष्टाचार को भी बढ़ावा मिलता है। (सत्यार्थप्रकाश ११वाँ समुल्लास, मूर्तिपूजा से १५ हानियाँ) मूर्तिपूजा के लिये दिये जाने वाले तर्कों की समीक्षा भी उन्होंने की है। जो लोग मूर्तिपूजा को स्थूल लक्ष्य और ईश्वर तक पहुँचने की सीढ़ी बताते हैं, उनके लिए महर्षि दयानन्द कहते हैं- मूर्तिपूजा सीढ़ी नहीं, खाई है। मूर्तिपूजा गुड़ियों के खेल के समान ब्रह्म तक जाने का साधन मानने वालों को महर्षि दयानन्द अज्ञानी मानते हैं, अतः शास्त्रों का अध्ययन, विद्वानों की सेवा, सत्संग, सत्यभाषाणादि व्यवहार से ही ब्रह्म की प्राप्ति सम्भव है। परमेश्वर को मूर्ति में व्यापक होने से मूर्तिपूजा से परमेश्वर की पूजा हो जाती है- ऐसा मानने वालों के लिए महर्षि दयानन्द का उत्तर है- "जब परमेश्वर सर्वत्र व्यापक है तो किसी एक वस्तु में परमेश्वर की भावना करना, अन्यत्र न करना- यह ऐसी बात है कि जैसे चक्रवर्ती राजा को सब राज्य की सत्ता से छुड़ा के एक छोटी-सी झोंपड़ी का स्वामी मानना।"

(सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास ११वाँ) जो लोग मूर्ति में परमेश्वर की भावना करने की बात करते हैं, उनके लिए महर्षि दयानन्द का उत्तर है- "भाव सत्य है या झूठ? जो कहो सत्य है तो तुम्हारे भाव के अधीन होकर परमेश्वर बद्ध हो जायेगा और तुम मृत्तिका में सुवर्ण रजतादि, पाषाण में हीरा पन्ना आदि, समुद्रफेन में मोती, जल में घृत, दुग्ध, दही आदि और धूलि में मैदा-शक्कर आदि की भावना करके उनको वैसा क्यों नहीं बनाते हो?"

(सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास ११वाँ, पृ. ३६८) मन्त्रों के आवाहन-विसर्जन से देवता के आ जाने और चले जाने की बात पर वे कहते हैं- 'जो मन्त्र पढ़कर आवाहन करने से देवता आ जाता है तो मूर्ति चेतन क्यों नहीं हो जाती? और विसर्जन करने से चला जाता है तो वह कहाँ से आता और कहाँ जाता है? सुनो अन्धो ! पूर्ण परमात्मा न आता और न जाता है। जो तुम मन्त्र बल से परमेश्वर को बुला लेते हो तो उन्हीं मन्त्रों से अपने मरे हुए पुत्र के शरीर में जीव को क्यों नहीं बुला लेते? और शत्रु के शरीर में जीवात्मा का विसर्जन करके क्यों नहीं मार सकते? सुनो भाई भोले लोगो! ये पोप जी तुम को ठग कर अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं। वेदों में पाषाणादि मूर्तिपूजा और परमेश्वर का आवाहन, विसर्जन करने का एक अक्षर भी नहीं।

शेष पृष्ठ ५ पर.....

जयंती दिवस २४ नवम्बर पर विशेषः-

चौधरी छोटूराम एवं शुद्धि आन्दोलन

-गुरप्रीत चहल जी

दीनबंधु चौधरी छोटूराम जैसा किसान हितैषी आज तक नहीं हुआ। चौधरी साहब ने अपना जीवन किसानों के हित के लिए जिया। किसान चाहे किसी भी मजहब या जाति का रहा हो, उनके लिए वह अपना था। उन्होंने अपने प्रेरणास्रोत ऋषि दयानंद के वाक्य 'किसान राजाओं का राजा होता है।' को चरितार्थ कर के दिखाया व अंग्रेजो की गलत नीतियों के कारण खस्ताहाल हुए पंजाब के किसान के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। चौधरी छोटूराम राजनीति में मजहब घुसाने के सख्त खिलाफ थे। वे राजनीति को आर्थिक आधार पर करने की वकालत करते थे। वे मजहब के आधार पर राजनीति करने वाले दलों के कट्टर विरोधी थे, जिस कारण कुछ सांप्रदायिक लोगों ने उन्हें धर्म विरोधी कहना शुरू कर दिया था ताकि कुछ धार्मिक सहानुभूति बटोर कर चौधरी साहब को राजनीति में हराया जा सके। पर जनता जानती थी कि चौधरी साहब सनातन वैदिक हिन्दू धर्म के प्रबल शुभचिंतक हैं। अतः उनकी न चलने दी।

वैदिक सिद्धान्तों के अनुयायीः-

आज भी कुछ लोग इस बात पर यकीन रखते हैं कि छोटू राम जी धर्म आदि से दूर ही रहते थे, जबकि सत्य तो यह है कि वे केवल राजनीति में धर्म घुसाने के विरोधी थे। व्यक्तिगत जीवन में वे बड़े धार्मिक थे-आचरण में भी व संगठनात्मक रूप से भी। वैदिक सिद्धांतों में उनका पूरा विश्वास था। मांस-मदिरा, फिजूल-खर्च (सिनेमा-सांग आदि पर) व नशों के सख्त विरोधी थे। गौ दुग्ध को प्राथमिकता देते थे व यज्ञ आदि के भी समर्थक थे। आर्यसमाज के सिद्धांत, इकबाल का साहित्य व योगीराज श्रीकृष्ण की शिक्षाएं उनके लिए प्रेरणा स्रोत थे।

१ मार्च १९४२ को रोहतक के जाट स्कूल में भाषण में उन्होंने स्वयं कहा था कि- 'मैं अपने जीवन का एक रहस्य खोल दूँ। जिस मार्ग पर चलना मैं अपना कर्तव्य कर्म मानता हूं, उस मार्ग का दृढ़ता पूर्वक अनुसरण करने में मुझे मुख्यतया उस दैवी विचार से शक्ति और प्रेरणा मिलती रही है जिसको यहाँ रोहतक से थोड़ी ही दूर कुरुक्षेत्र में ५००० साल पहले भगवान कृष्ण ने प्रकट किया था।

शुद्धि आंदोलन के प्रबल समर्थकः-

चौधरी छोटूराम 'घर-वापसी' के बहुत बड़े समर्थक थे। अपने मुखपत्र 'जाट गजट' अखबार में कई लेख इस मुद्दे पर लिखते रहते थे। मुसलमानों को पुनः वैदिक धर्म में लाते थे। जाट गजट ५ दिसंबर १९२५ पेज नंबर ४ में चौधरी छोटूराम ने 'एंब्रेस योर फॉलन ब्रदर्स' नाम से लेख लिखा था। जिसका अर्थ था भटके हुए भाइयों को वापिस राह पर लाना। इसमें हर जाति के धर्म परिवर्तित मुसलमान को पुनः सनातन वैदिक धर्मी बनाने के लिए कई जाट पंचायतों में रेजोल्यूशन पास करवाए। १२ नवंबर १९२५ को पुष्कर की जाट महारैली में भरतपुर जाटनरेश विजेंद्र की अध्यक्षता में मुसलमानों की घर वापसी करवाने व उनको अपनाने का रिजोल्यूशन चौधरी छोटूराम ने पास करवाया जिसके बाद पूरे भारत में हर जाति के हिन्दू जो मुसलमान बन चुके थे उन्हें वापिस हिन्दू बनाने की आर्य समाजी मुहिम को फिर से बल मिला। चौधरी साहब से प्रेरित जाट महासभाओं ने भी शुद्धि आंदोलन तीव्र गति से चलाया। चौधरी साहब व कुछ अन्य आर्य लीडरों ने मिलकर एक शुद्धि कमेटी की भी स्थापना की, जिसके प्रधान चौधरी घासीराम आर्य बने वहीं ज्वाइंट सेक्रेट्री चौधरी छोटूराम बने।

जाट क्षत्रीय महासभाओं का उपयोग वे हर जाति के लोगो के लिए करते थे और अपने किसान हितेषी आंदोलनों व धर्म कार्यो में इनकी शक्ति का बहुत फायदा उठाते थे।

इधर मुसलमानों ने भी तबलीग आंदोलन चलाया हुआ था, जिस पर छोटूराम के विचार थे कि हमें भी (वैदिक धर्मियों को) शुद्धि आंदोलन तेज रफ्तार से चलाना चाहिए ताकि इन तबलीग जैसे इस्लामिक मतान्तरण के खतरों से बचा जा सके। क्या कोई गैर धर्म-प्रेमी ऐसी बात कह सकता है?

दलितों की घर वापसीः-

सन १९३२ में रोहतक के कुछ हिंदू दलित भाइयों ने इस्लाम ग्रहण कर लिया। इस बात की सूचना लगते ही चौधरी छोटूराम आर्य लाहौर से रोहतक पहुंचे। उन दलितों की पुनः सनातन वैदिक धर्म में वापसी करवाई व दलितों को धर्म न छोड़ने के लिए प्रेरित किया। यह घर वापसी रोहतक रेलवे रोड़ के किसी मन्दिर में हुई थी। प्रसिद्ध इतिहासकार कैप्टन दलीपसिंह अहलावत उस शुद्धि कार्यक्रम में मौजूद थे। उन्होंने इसका पूरा ब्यौरा अपनी पुस्तक 'जाट वीरों का इतिहास' के दसवें अध्याय में पेज नंबर ६२६-३० पर दिया है। कौन है? जो इस सत्य को झुठला सके! कौन है, जो अब भी चौधरी छोटूराम आर्य के धर्म रक्षक होने पर विश्वास नहीं करेगा? ऐ मेरे भाइयो! कब तक सच को झुठलाओगे? सत्यमेव जयते।

धर्म रक्षकः-

एक आर्यसमाजी ही अपने धर्म का कट्टर और गैर सांप्रदायिक रह सकता है। दयानन्द से लेकर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल, चौधरी चरणसिंह आर्य, चौधरी छोटूराम आर्य इसके साक्षात् उदाहरण हैं। ये सभी महापुरुष हिंदू-मुस्लिम एकता के समर्थक व अपने वैदिक धर्म के पक्के थे। पाकिस्तान बनने की संभावनाएँ पंजाब में फैलने से उनको पंजाब के हिंदुओं की चिंता होने लगी थी। चौधरी साहब कहते थे कि अगर पाकिस्तान किसी तरह बन भी गया तो पंजाब के मुस्लिम बहुल इलाकों के हिंदू सिखों को बचाने व हक दिलाने का कर्तव्य उनका है। एक बार अंबाला डिवीजन को मेरठ डिवीजन में मिलाने के प्रस्ताव का उन्होंने शक्ति से विरोध किया था, क्योंकि इससे अंबाला डिवीजन (हरियाणा) जो कि हिंदू बहुल है, पंजाब से अलग हो जाता व बाकी पंजाब फिर मुस्लिम राज जैसा रह जाता, जहाँ पर अल्पसंख्यक हिंदुओं की बुरी हालात होती।

हिंदुइज्मः-

हिंदू हित के लिए उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था कि In any matter related to Hinduism] if anyone will attempt to Devour the Hindus] I would not allow him to do so before I was myself devoured first----

अर्थात् - हिंदुत्व से जुड़े किसी भी मुद्दे पर मुझे हिंदू धर्म की वफादारी के अलावा कुछ नहीं चाहिए। अगर कोई हिंदुत्व को खत्म करने की कोशिश करेगा तो मैं जब तक खुद नहीं मिट जाऊं तब तक हिंदुत्व खत्म नहीं होने दूंगा। भरी सभा में मुस्लिम लीडरों के बीच निडरतापूर्वक ऐसी बातें स्वामी स्वतंत्रतानंद जी का शिष्य ही कह सकता है। जब नेताजी सुभाष बोस के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज आगे बढ़ रही थी, तब छोटूराम ने ही अपने गुरु स्वामी स्वतंत्रानंद जी व पण्डित जगदेव सिंह सिद्धांती आदि को हरियाणा में फौजियों को बगावत की तैयारी करने और बोस से मिल जाने के लिए भेजा था।

हरियाणवियों का बाबा दयानंदः-

सोनीपत में जमींदार लीग की बड़ी रैली चल रही थी। पंजाब के बड़े मुसलमान व सिख नेता वहाँ पधारे थे। एक सिख नेता ने अपने भाषण में किसानों की बात से हटकर हरियाणवियों को सिख बनने का न्योता दे डाला। जगदेव सिंह सिद्धांती व अन्य आर्य विद्वानों के कुछ कहने से पहले ही चौधरी छोटूराम आए व कहा कि किसान रैली में किसान हित की ही बात करो। रही गुरु की बात- तो हरियाणवियों का बाबा (गुरु) तो महृषि दयानंद सरस्वती ही है।आपको जो भी सन्त गुरु मानना है माने हम तो सनातनी ही रहेंगे।

चौधरी छोटूराम देश के विभाजन के खिलाफ थे उन्होंने पाकिस्तान बनने का पूरा विरोध किया था जिस पर सावरकर जी ने उनकी तारीफ भी की थी।

सरदार पटेल जी ने उनकी मृत्यु के पश्चात कहा था कि अगर चौधरी छोटूराम जी होते तो मुझे पंजाब की किसी रियासत को भारत में मिलाने में जरा सी भी मेहनत न करनी पड़ती।

चौधरी छोटूराम जी ने सिखों द्वारा उठाई गयी अलग राज्य की मांग का भी पुरजोर विरोध किया के धर्म व जाति के आधार पर देश के टुकड़े करना सरासर गलत है।

चौधरी छोटूराम जी ने जातिगत आरक्षण का भी पुरजोर विरोध किया था।

मोपला दंगो के आधार पर इस्लाम की नीति का भी विरोध किया।

धर्म परिवर्तन करने पर अंबेडकर जी को भी अपने विचारों से फटकार लगाई थी।

यह थी चौधरी छोटूराम की ऋषि-भक्ति।

मैंने चौधरी छोटूराम के धर्मपरायण होने की कुछ बातों का ही विवरण व तथ्य प्रस्तुत किए, ताकि आमजन को पता लगे कि चौधरी छोटूराम जी भी वैदिक धर्मी थे व अपने धर्म के शुभचिंतक थे। अपने को वे आर्यों का वंशज मानते थे। उम्मीद है कि आज का युवा वर्ग व नेतागण उनकी ही भाँति धर्म-रक्षक, गैर-सांप्रदायिक व किसान हितैषी बनने का प्रयास करेंगे।

संदर्भः

(क) दीनबंधु का सफरनामा, लेखकः नारायण तेहलान पेज १८५

(ख) दीनबंधु का सफरनामा पेज नंबर १७८

(ग) देखें जाट गजट ३० नवंबर १९२७

(घ) देखो जाट गजट ३० नवम्बर १९२७

(ङ) Sir Chhoturam % Life and times By Ch-Deepchand Verma पेज नंबर १४५

(च) अतः वेदनाः बिचारा कृषक अनुवादक व संपादक राजेंद्र जिज्ञासु, पेज नंबर १६ व चौ० छोटूराम ने 'जाट गजट' २८ अक्टूबर १९२५ में भी एक लेख छापा था इसमें हरियाणवियों को सिखी की बजाय वैदिक धर्म में रहने को कहा गया था। कॉलेज की मैगजीन में सन १९०१ में लिखा लेख।

●●●

नमस्ते! नमस्ते जी!!

-धर्मेन्द्र सिंह

अभिवादन के लिये केवल और केवल नमस्ते का ही प्रयोग करना चाहिये क्योंकि हमारे सभी आदि ग्रन्थों में नमस्ते का ही प्रयोग हुआ है और हमारे सभी महान् पुरुषों ने नमस्ते का ही अभिवादन के रूप में प्रयोग किया है, तो उसे ही अपनाना उत्तम होगा और अभिवादन भी तभी सम्पादित होता है।

वाल्मीकि रामायण में विश्वामित्र वशिष्ठ को नमस्ते कहते हैं । नमस्ते अस्तु गमिष्यामि मैत्रिणेक्षस्व चक्षुषा।। वा॰रा॰५२/१७

मां हरोत्सृज काकुत्स्थौ नमस्ते राक्षसोत्तमः।। (अरण्य ४/३)

श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र को नमस्ते की।

शिवेन पाण्डवान् ध्याहि नमस्ते भारतर्षभः।।

(महा॰शल्य॰अ॰६३/५१)

श्रीराम एवं श्रीकृष्ण दोनों ही नमस्ते कहते थे।

स प्रांजलिरभिप्रेत्य प्रणतः पितुरन्तिके।

नाम स्वं श्रावयन् रामोववंदे चरणौपितुः।। (वा॰रा॰अ॰३/३२)

श्रीराम दोनों हाथ जोड़कर विनीत भाव से पिता के पास गये और अपना नाम सुनाते हुये उन्होंने उनके दोनों चरणों में नमस्ते किया। सभी छोटे बड़े एक दूसरे को नमस्ते कहें।

इसका उत्तर वेद मन्त्र देता है-नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापराजाय च नमो मध्माय चाप्रगलभाय च नमो जघन्याय च बुध्न्यायच।। (यजु॰१६/३२)

नमो महद्भयो नमो अर्भकेभ्यः नमो युवाभ्यो नमो आसीनेभ्यः।।

(ऋ॰१२ / ७ /१३)

ज्येष्ठ और कनिष्ठ सबके लिये नमस्ते हो। युवा और वृद्ध सभी का सत्कार आपस में नमस्ते से होना चाहिये।

'नमस्ते शब्द करोना वायरस के कारण बहुत प्रसिद्ध हुआ है....!!! देश विदेश में लोगों ने नमस्ते को उत्तम अभिवादन स्वीकार किया' महाभारत काल तक भारत का गौरव पूरे विश्व में शंखनाद कर रहा था। परन्तु महाभारत युद्ध के बाद धीरे-धीरे भारत की वैदिक संस्कृति का पराभव प्रारम्भ हो गया जो वर्तमान में विलुप्त सा प्रतीत होता है।

नमस्ते शब्द वैदिक है। जब कभी भी यहाँ के लोग परस्पर मिलते थे तो नमस्ते द्वारा एक दूसरे का अभिवादन करते थे। नमस्ते शब्द ही अभिवादन का सबसे पुरातन आदरसूचक शब्द है। नमस्ते दो शब्दों से मिलकर बना है नमः+ते=नमस्ते अर्थात मैं आपको नमन करता हूँ। आपका आदर करता हूँ। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी जो वेद के प्रकाण्ड विद्वान थे उन्होंने नमस्ते का अर्थ ''मैं आपका मान्य करता हूँ'' लिखा है।

नमस्ते करते समय दोनों हाथों को जोड़कर हृदय के पास लगाकर फिर सिर झुका कर नमस्ते का उच्चारण करना चाहिए तभी नमस्ते की पूरी प्रक्रिया पूर्ण होती है। इससे हाथ, हृदय, सिर तीनों के द्वारा श्रद्धा भाव से अपने सामने वाले को आदर व सम्मान से नमन किया जाता है।

पृष्ठ ३ का शेष.....

जहाँ तर्क युक्तियों से महर्षि दयानन्द ने मूर्तिपूजा का खण्डन किया, वहाँ मूर्तिपूजा वेद विरुद्ध है, इसके लिए भी वेदादिशास्त्रों से प्रमाणों को प्रस्तुत किया। स्तुति प्रार्थना उपासना, ब्रह्म विद्या आदि प्रकरणों में वेद मन्त्रों की व्याख्या करते हुए मूर्तिपूजा की व्यर्थता को सिद्ध किया है- "जो असम्भूति अर्थात् अनुत्पन्न अनादि प्रकृति कारण की ब्रह्म के स्थान पर उपासना करते हैं, अन्धकार अर्थात् अज्ञान और दुःख सागर में डूबते हैं और सम्भूति जो कारण से उत्पन्न हुए कार्य रूप पृथ्वी आदि भूत, पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादि के शरीर की उपासना ब्रह्म के स्थान में करते हैं, वे इस अन्धकार से भी अधिक अन्धकार अर्थात् महामूर्ख, चिरकाल घोर दुःख रूप नरक में गिर के महाक्लेश भोगते हैं।

जो सब जगत् में व्यापक है, उस निराकार परमात्मा की प्रतिमा, परिमाण, सादृश्य वा मूर्ति नहीं है।

जो वाणी की इदन्ता अर्थात् यह जल है लीजिए, वैसा विषय नहीं और जिसके धारण और सत्ता से वाणी की प्रवृत्ति होती है उसी को ब्रह्म जान और उपासना कर और जो उससे भिन्न है, वह उपासनीय नहीं। जो मन से 'इयत्ता' करके मनन में नहीं आता, जो मन को जानता है उसी को तू ब्रह्म जान और उसी की उपासना कर। जो उससे भिन्न जीव और अन्तःकरण है, उसकी उपासना ब्रह्म के स्थान में मत कर। जो आँख से नहीं दीख पड़ता और जिससे सब आँखें देखती हैं, उसी को तू ब्रह्म जान और उसी की उपासना कर और जो उससे भिन्न सूर्य, विद्युत् और अग्नि आदि जड़ पदार्थ हैं, उनकी उपासना मत कर। जो श्रोत्र से नहीं सुना जाता और जिससे श्रोत्र सुनता है, उसी को तू ब्रह्म जान और उसी की उपासना कर और उससे भिन्न शब्दादि की उपासना उसके स्थान में मत कर। जो प्राणों से चलायमान नहीं होता, जिससे प्राण गमन को प्राप्त होता है, उसी ब्रह्म को तू जान और उसी की उपासना कर। जो यह उससे भिन्न वायु है, उसकी उपासना मत कर।''

(सत्यार्थप्रकाश ११वा समुल्लास, पृ. ३७१ महर्षि दयानन्द ने वेद में निराकार सर्वव्यापक ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन करने वाले अनेक मन्त्रों का उल्लेख अपने वेदभाष्य और अन्य ग्रन्थों में किया है, सपर्यगात्, सहस्रशीर्षा., विश्वतश्चक्षु., आदि मन्त्र तथा उपनिषद् वाक्यों के प्रमाण दिये हैं।

जहाँ महर्षि दयानन्द ने मूर्तिपूजा का खण्डन किया है, वहीं इस खण्डन से मूर्तिपूजा के अभाव में होने वाली रिक्तता को भी पूर्ण किया है। पंचमहायज्ञविधि, संस्कारविधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में निराकार ब्रह्म की उपासना कैसे की जाती है- इसका भी उल्लेख किया है। मूर्तिपूजा का खण्डन करते हुए देवपूजा का प्रकार बताते हुए वास्तविक देव और उनकी पूजा के प्रकार का भी उल्लेख किया है, यथा ''प्रश्न- किसी प्रकार की मूर्तिपूजा करनी नहीं और जो अपने आर्यवर्त में पंचदेवपूजा शब्द प्राचीन परम्परा से चला आता है, उसकी यही पंचायतन पूजा जो कि शिव, विष्णु, अम्बिका, गणेश और सूर्य की मूर्ति बनाकर पूजते हैं, यह पंचायतन पूजा है या नहीं?

उत्तर- किसी प्रकार की मूर्तिपूजा न करना, किन्तु 'मूर्तिमान' जो नीचे कहेंगे, उनकी पूजा अर्थात् सत्कार करना चाहिए। वह पंचदेवपूजा, पंचायतन पूजा शब्द बहुत अच्छा अर्थ वाला है, परन्तु विद्याविहीन मूढ़ों ने उसके उत्तम अर्थ को छोड़ कर निकृष्ट अर्थ को पकड़ लिया। जो आजकल शिव आदि पाँचों की मूर्तियाँ बनाकर पूजते हैं, उनका खण्डन तो अभी कर चुके हैं, पर जो सच्ची पंचायतन वेदोक्त और वेदानुकूल देवपूजा और मूर्ति पूजा है, सुनो- प्रथम माता- मूर्तिमती पूजनीय देवता, अर्थात् सन्तानों को तन, मन, धन से सेवा करके माता को खुश रखना, हिंसा अर्थात् ताड़ना कभी न करना। दूसरा पिता- सत्कर्तृतव्य देव, उसकी भी माता के समान सेवा करनी। तीसरा आचार्य - जो विद्या का देने वाला है, उसकी तन, मन, धन से सेवा करनी। चौथा अतिथि- जो विद्वान् धार्मिक, निष्कपटी, सबकी उन्नति चाहने वाला जगत् भ्रमण करता हुआ सत्य उपदेश से सबको सुखी करता है, उसकी सेवा करें। पाँचवाँ स्त्री के लिए पति और पुरुष के लिए स्व-पत्नी पूजनीय है।

ये पाँच मूर्तिमान् देव, जिनके संग से मनुष्य देह की उत्पत्ति पालन, सत्यशिक्षा, विद्या और सत्योपदेश की प्राप्ति होती है, ये ही परमेश्वर को प्राप्त करने की सीढ़ियाँ हैं। इनकी सेवा न करके जो पाषणादि मूर्ति पूजते हैं, वे अतीव वेदविरोधी हैं। (पृ. ३७५-३७६)

ऋषि दयानन्द के जीवन में जो क्रान्ति मूर्ति की पूजा करने से उत्पन्न हुई थी, वह उनके पूरे जीवन में बनी रही। महर्षि दयानन्द ने अपने भाषण, लेखन, वार्तालाप द्वारा मूर्तिपूजा की निस्सारता को प्रतिपादित किया है। ऐसी पद्धति जो जीवन में लाभ के स्थान पर हानि करती है, जिससे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक लाभ की कोई संभावना नहीं, जिसके करने से मनुष्य का पतन अवश्यम्भावी है, वह कार्य इस समय में इतने बड़े रूप में कैसे चला? इसके चलने के पीछे क्या कारण है, इनका भी उन्होंने युक्ति प्रमाण पुरस्सर प्रदर्शन किया है। इस प्रकार संक्षेप में कह सकते हैं कि महर्षि दयानन्द ने मूर्तिपूजा के दार्शनिक, सामाजिक, आर्थिक सभी पक्षों का गहराई से अध्ययन किया और साहसपूर्वक समाज के सामने रखा। समाज में जिनको मूर्तिपूजा से प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ मिलता है, वे कभी भी इसका खण्डन देखना नहीं चाहेंगे, परन्तु महर्षि दयानन्द ने अपने प्राणों की परवाह किये बिना इसका प्रबल खण्डन किया और एक निराकार सर्वव्यापक ईश्वर जिसका स्वरूप आर्यसमाज के दूसरे नियम में बताया गया है, उसी की पूजा करने का विधान किया।

स्वामी दयानन्द ने जब भली प्रकार समझ लिया कि मूर्ति पूजा असत्य के साथ पाखण्ड भी है, जिसके द्वारा जनता को भ्रमित करके उनका धन लूटा जा रहा है, उन्हें अकर्मण्य बना कर भीरु परमुखापेक्षी बनाने में समाज का श्रेष्ठ कहा जाने वाला वर्ग लगा है, इससे समाज को जो दिशा और मार्गदर्शन मिलना चाहिए, वह तो नहीं मिला उसके स्थान पर समाज के रक्षक ही समाज को लूटने वाले बन गये। इसके लिए महर्षि दयानन्द ने जो मार्ग अपनाया, उनमें प्रथम यह था कि समाज में जिन वेदों की प्रतिष्ठा थी, उन वेदों में तथा वेदानुकूल वैदिक साहित्य में मूर्ति पूजा का विधान नहीं है, यह घोषणा की। इसके साथ दूसरा- युक्ति और तर्क से भी मूर्ति पूजा को निरर्थक और पाखण्ड पूर्ण कृत्य है, यह सिद्ध किया।

महर्षि दयानन्द ने प्रचार क्षेत्र में उतरने के साथ ही मूर्तिपूजा पर प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया। पण्डित लोग शास्त्रार्थ में पराजित हो जाते थे, बुद्धिमान् श्रोता स्वामी जी की युक्ति व प्रमाणों से सहमत होकर मूर्तिपूजा छोड़ने के लिए तैयार हो जाते थे, परन्तु पण्डे, पूजारी, मन्दिर, मठ के संचालकों की आजीविका पर यह सीधी चोट थी, इसलिए पण्डित लोग भागकर काशी पहुँचते थे और काशी के पण्डितों से मूर्तिपूजा के पक्ष में व्यवस्था लिखवा लाते थे। इसी कारण मूर्तिपूजा के गढ़ काशी को ही जीतने के लिए स्वामी दयानन्द ने काशी के पण्डितों को चुनौती दे डाली और यह चुनौती भी काशी नरेश के माध्यम से दी।

काशी शास्त्रार्थ का निश्चय काशी नरेश की आज्ञा अनुसार हुआ। वे शास्त्रार्थ में मध्यस्थ बने। मूर्तिपूजा के पक्ष-विपक्ष में जो कुछ इस शास्त्रार्थ में मिलता है, वह विषय से सम्बद्ध तो न्यून ही है, शास्त्रार्थ की दिशा भटकाने वाला अधिक है। इसकी चर्चा काशी शास्त्रार्थ की छपी पुस्तक की भूमिका देखने से स्पष्ट हो जाता है-

१. पाषाणादि मूर्ति पूजनादि में वैदिक प्रमाण होता तो क्यों न कहते?

२. स्वपक्ष को वैदिक प्रमाणों से सिद्ध किये बिना मनुस्मृति आदि को वेदानुकूल हैं या नहीं, इस प्रकरणान्तर में क्यों जा गिरते?

३. पुराण आदि शब्द ब्रह्म वैवर्त आदि ग्रन्थों से भी अपना पक्ष सिद्ध नहीं कर सके।

४. प्रतिमा शब्द से मूर्तिपूजा को सिद्ध करना चाहा, वह भी उनसे नहीं हो सका।

५. पुराण शब्द स्वामी जी विशेषण वाची मानते हैं, काशीस्थ पण्डित विशेष्य वाची, परन्तु पण्डित लोग अपना पक्ष सिद्ध नहीं कर सके। काशी शास्त्रार्थ, दयानन्द ग्रन्थमाला, भाग-३, पृ - ८४ ? (स्वामी दयानन्द ४५२)

स्वामी दयानन्द के मूर्ति पूजा विषयक विचारों को जानने के क्रम में काशी शास्त्रार्थ के पश्चात् स्वामी दयानन्द का एक और संस्कृत भाषा शास्त्रार्थ जो प्रतिमा पूजन विचार नाम से प्रथम बार सम्वत् १९३० में आर्य भाषा व बंगला भाषा में अनूदित होकर लाइट प्रेस बनारस से छपा था। यह कोलकाता के पास हुगली नामक स्थान में हुआ था। शास्त्रार्थ सम्वत् १९३० चैत्र शुक्ल एकादशी, मंगलवार तदनुसार ८ अप्रैल १८७३ के दिन हुआ था।

इस शास्त्रार्थ में प्रतिमा शब्द पर, पुराण शब्द पर तथा देवालय, देवपूजा शब्द पर विचार किया गया है। स्वामी दयानन्द कहते हैं- प्रतिमा प्रतिमानम् = जिससे प्रमाण अर्थात् परिमाण किया जाय, उसको कहते हैं जैसे पाव, आधा इसके अतिरिक्त यज्ञ के चमसा आदि को भी प्रतिमा कहते हैं। इसके लिए स्वामी दयानन्द ने मनु का प्रमाण उद्धृत किया है- आदि ।

तुलामानं प्रतिमानं सर्वं च स्यात्
सुलक्षितम्। षट्सु षट्सु च मासेषु
पुनरेव परीक्षयेत्।।

• मनु ८/४०३

स्वामी दयानन्द पुराणों को अमान्य करते हैं। पुराणों में मूर्तिपूजा का विस्तार से वर्णन है, जिन्हें आजकल की भाषा में शिव, ब्रह्मवैवर्त, भागवत आदि कहते हैं, परन्तु स्वामी दयानन्द पुराण को शब्दार्थ के रूप में पुराना अथवा पुस्तक के रूप में शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थों के नाम पुराण स्वीकार करते हैं।

१. पुराभवं पुरा भवा पुराभवश्च इति पुराणं पुराणी पुराणः ।

२. वहाँ ब्राह्मण पुस्तक जो शतपथादिक हैं, उनका ही नाम पुराण है तथा शंकराचार्य जी ने भी शारीरक भाष्य में और उपनिषद् भाष्य में ब्राह्मण और ब्रह्मविद्या का ही पुराण शब्द से अर्थ ग्रहण किया है।

३. तीसरा देवालय और चौथा देव-पूजा शब्द है। देवालय, देवायतन, देवागार तथा देव मन्दिर इत्यादिक सब नाम यज्ञशालाओं के ही हैं।

४. इससे परमेश्वर और वेदों के मन्त्र उनको ही देव और देवता मानना उचित । अन्य कोई नहीं।

(-स्वामी दयानन्द, प्रतिमा पूजन विचार, पृ. ४८३-४८५, दयानन्द ग्रन्थमाला) ऋषि दयानन्द के जीवन में मूर्तिपूजा की अवैदिकता और अनौचित्य पर वाद-संवाद, शास्त्रार्थ, भाषण, चर्चा, परिचर्चा तो बहुत मिलती है, परन्तु एक आश्चर्यजनक प्रसंग भी मिलता है। स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों और मान्यताओं को लेकर कोलकाता की आर्य सन्मार्ग सन्दर्शिनी सभा का एक अधिवेशन २२ जनवरी रविवार सन् १८८१ को कोलकाता विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में भारत के ३०० विद्वानों की उपस्थिति में हुआ, जिसमें स्वामी दयानन्द के मन्तव्यों को सर्वसम्मति से अस्वीकार किया गया। इसमें आश्चर्य और महत्त्व की बात यह है कि इस सभा में पूर्व पक्षी के रूप में स्वयं स्वामी दयानन्द या उनका कोई प्रतिनिधि उपस्थित नहीं था, न ही निमन्त्रित किया गया था और न ही किये जाने वाले प्रश्नों के उनसे उत्तर माँगे गये थे। यह कार्य नितान्त एकपक्षी और सभा की ओर से ऋषि दयानन्द की मान्यता को अस्वीकार करते हुए पाँच उत्तर स्वीकृत हुए थे।

आर्यसमाज के आरम्भिक काल के एक और सुयोग्य लेखक बाबा छज्जूसिंह जी द्वारा लिखित व सन् १९०३ ई. में प्रकाशित Life and Teachings of Swami Dayananda पुस्तक की भी एतद्विषयक कुछ पंक्तियाँ यहाँ देना उपयोगी रहेगा। विद्वान् लेखक ने लिखा है-

'While Swami Dayananda was at Agra a Sabha called the Arya Sanmarg Sandarshini Sabha] was established at Calcutta] with the object of having it decided and settled] once for all] by the most distinguished representatives of orthodoy in the land (that could be got hold of for the purpose of course) that Dayanand's views on Shraddha] Tiraths] Idol&Worship] etc- were entirely unorhodo and unjustifiable- Sanskrit scholars rising to the number of three hundred responded to the call of the Sabha] and a grand meeting composed of the local men and of the outsiders] came off in the Senate Hall on 22nd January] 1881- It is significant that not one of the numerous distinguished pandits present thought of suggesting or moving that the man upon whom the Sabha was going to sit in judgement] should be condemned or acquitted after he had been fully heard- It may be urged that the Sabha was not in humour to acquit Dayanand under any circumstances] but still he should have been permitted to have his say before he was condemned- Surely] one man could be dealt with very well by and assemblage so illustrious and so erudite- But the Pandits and their admirers were wise in their generation- Dayanand] though ine] had proved too many for still a more learned and august gathering at Benares- 1
(1- Life and Teachings of Swami Dayananda [Page- 39] Part&II)

आर्य सन्मार्ग सन्दर्शिनी सभा कलकत्ता और स्वामी दयानन्द सरस्वती का सिद्धान्त - सबको ज्ञात हो कि २२ जनवरी सन् १८८१ ई. को रविवार के दिन सायंकाल सीनेट हॉल कलकत्ता में वहाँ के श्रीमन्त बड़े-बड़े लोगों और प्रसिद्ध पण्डितों ने एकत्र होकर यह सभा दयानन्द सरस्वती जी की कार्यवाहियों पर विचार करने के उद्देश्य से आयोजित की थी। इस सभा का विस्तृत वृत्तान्त हम 'सार सुधा 'निधि' पत्रिका से नीचे अंकित करते हैं। इस सभा के व्यवस्थापक पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न जी कालेज के प्रिंसिपल थे। इस सभा में पण्डित तारानाथ तर्कवाचस्पति, जीवानन्द विद्यासागर बी.ए. और नवदीप के पण्डित भुवनचन्द्र विद्यारत्न आदि बंगाल के लगभग तीन सौ पण्डित और कानपुर के पण्डित बाँकेबिहारी वाजपेयी और यमुनानारायण तिवारी और वृन्दावन के सुदर्शनाचार्य जी और तंजर (मद्रास प्रेसीडेन्सी) के पण्डित राम सुब्रह्मण्यम शास्त्री जिनको सूबा शास्त्री भी कहते हैं, पधारे थे। इनके अतिरिक्त श्रीमन्त लोगों में वहाँ के सुप्रसिद्ध भूपति ऑनरेबल राजा यतीन्द्र मोहन ठाकुर सी.एस.आई., महाराज कमलकृष्ण बहादुर, राजा सुरेन्द्रमोहन ठाकुर, सी. एस.आई., राजा राजेन्द्रलाल मलिक, बाबू जयकिशन मुखोपाध्याय, कुमार देवेन्द्र मलिक, बाबू रामचन्द्र मलिक, ऑनरेबल बाबू कृष्णदास पाल, लाला नारायणदास मथुरा निवासी, राय बद्रीदास लखीमबहादुर, सेठ जुगलकिशोर जी, सेठ नाहरमल, सेठ हंसराज इत्यादि कलकत्ता निवासी सेठ उपस्थित थे। यद्यपि पण्डित ईश्वरचद्र विद्यासागर व बाबू राजेन्द्रलाल मित्र एल.एल.डी. ये दोनों महानुभाव पधार नहीं सके थे, तथापि इन महानुभावों ने सभा की कार्यवाही को जी-जान से स्वीकार किया। जिस समय ये सब सज्जन सीनेट हॉल में एकत्र हुए, तब पण्डित महेशचन्द्र न्यायारत्न जी ने इस सभा के आयोजन करने का विशेष प्रयोजन बता करके निम्नलिखित प्रश्न प्रस्तुत किये-

प्रश्न १- पं. महेशचन्द्र न्यायरत्न जी ने पहला प्रश्न यह किया

शेष पृष्ठ ७ पर.....

महर्षि की अमृत धारा

-प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु

महर्षि दयानन्द ने सब मानवीय रोगों के लिए अमृतधारा दी हैं। महर्षि के आध्यात्मिक विचारों की शान्त निर्मल सरिता में डुबकी लगाइए । जीवन में एक रस उत्पन्न होगा। ऋषि के सामने मानव की सर्वागीण उन्नति का वैदिक लक्ष्य है ।

ऋषि लिखते हैं–

'आप मुझको ऐहिक और पारमार्थिक इन दोनों सुखों का दान शीघ्र दीजिए, जिससे सब दुःख दूर हों, हमको सदा सुख ही रहे ।'' overline ७१४ ने इस प्रार्थना में स्पष्ट कर दिया है कि वैदिक धर्म ऐहिक सुखों की निन्दा नहीं करता और ऐहिक सुख ही सब कुछ नहीं ध्येय धाम दूर।

ईश्वर कैसे प्राप्त हो ?

ऋषि स्वयं लिखते हैं-'' आप अपनी कृपा से ही हमको प्राप्त हों।'' इस पर हम टिप्पणी नहीं करते। ऋषि का जीवन चरित्र पढ़ने व वेदभाष्य पढ़ने से यह स्पष्ट हो सकता है ।

सृष्टि का विज्ञान दीजिए–

ऋषि परमेश्वर से प्रार्थी हैं ''कृपा करके हमको अपना तथा सृष्टि का विज्ञान दीजिये १ ' ११ यह स्मरण रखें कि विश्व इतिहास में शदियों के बाद महर्षि दयानन्द ही प्रथम महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने धर्म का प्रकाश करते हुए विज्ञान का अभिनन्दन किया है ।

गुणसम्पन्नता की प्रार्थना हे कृपा निधे! हमको विद्या, सौर्य, बल, पराक्रम, चातुर्य विविध धन ऐश्वर्य विनय, साम्राज्य, सम्मति, सम्प्रीति, स्वदेश सुख "हे कृपानिधे ! हमको विद्या, शौर्य, बल, पराक्रम, चातुर्य, सम्पादनादि गुणों में सब नरदेहधारियों में उत्तम करो।'' महर्षि जहां पराक्रम और ऐश्वर्य के लिए प्रार्थी हैं। यहां मानवीय विकारों पर अंकुश brake लगाने के लिए ईश्वर से विनय की कामना करते हैं। विनय के अभाव में ही बड़े-बड़े सम्राट् और बड़े-बड़े साम्राज्य डूबे हैं।

राज्य कैसे बढ़े ?

''हम पर सहाय करो, जिससे सुनीतियुक्त हो के हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े।'' साधनों के अभाव से इतने राष्ट्र नहीं बिगड़े जितने कि कुनीतियुक्त शासकों के व्यवहार से बिगड़े हैं।

सुनीति कैसे मिले ?

ऋषि स्वयं इसी प्रार्थना के साथ लिखते हैं, ''सत्यविद्या से युक्त सुनीति दें।''

विशेष मित्रता–

''हम भी सब जीवों के मित्र हों तथा विशेषमित्रता आप से ही रखें।'' आर्य कहाने वाले हम लोग इस आर्ष विनय को समझने का यत्न करें ।

परमात्मा का दैनिक उपदेश–

'स्वशक्ति से सब जीवों के हृदय में सत्योपदेश नित्य ही कर रहे हो।'' क्या हमारे हृदय में परमेश्वर का उपदेश नित्य सुनाई देता है ? यदि नहीं तो कारण क्या है ? आर्ष वचन तो यही है कि ईश्वर सब जीवों के हृदय में नित्य सत्योपदेश करता है ।

पुरुषार्थी परमार्थी बनें–

''परस्पर प्रीतिमान, रक्षक सहायक परम पुरुषार्थी हों । एक दूसरे का दुःख न देख सकें।'' कितनी सुन्दर भद्र भावना है । मानव के कल्याण का क्या कोई और मार्ग है ?

''निर्वैर प्रीतिमान, पाखण्ड रहित करें'' पाखण्ड चाहे धर्म के नाम पर हो चाहे राजनीति के क्षेत्र में हो, वैर विरोध और छलछद्म का कारण बनता है।

ऋषि ने विनय की है–

''यथायोग्य उद्यम को कभी मत छोड़ो।'' मनुष्य के लिए यह उपदेश रूपी अमृतधारा सर्व सुखों की खान है । ऋषि 'परम पुरुषार्थ' का आदेश देते हैं । ऋषि ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में सन्तोष की परिभाषा भी अत्यन्त पुरुषार्थ लिखी है। जिसके सन्तोष की परिभाषा अत्यन्त पुरुषार्थ है, उसके पुरुषार्थ की परिभाषा क्या होगी ?

मान प्रतिष्ठा पाकर–

''हे ईश्वर ! सदैव सुखी हो के आप की आज्ञा और उपासना में तत्पर रहूँ।'' दुःख में तो सब स्मरण करते हैं। आर्ष विनय यह है कि सुख के झूले में झूलते हुए भी परमेश्वर की आज्ञा का पालन करें और उस सच्चिदानन्द स्वरूप की उपासना करते हुए आगे बढ़ें ।

निर्भयता–

वैदिक धर्म में ईश्वर से समीपता की कसौटी निर्भयता भी है। निर्भय होकर सत्य नहीं कह सकते तो फिर भक्त कैसे ? ऋषि की विनय है-''किंच किसी से किसी प्रकार का भय हम लोगों को आप की कृपा से कभी न हो । निर्भय होकर परमानन्द को भोगें।''

जड़ता दूर हो–

ऋषि की विनय है-''मेरी जड़ता सब दूर हो जाय । '' यदि जीवन में सत्य नहीं, न्याययुक्त प्रवृत्ति नहीं, सत्संग में रुचि नहीं, सन्ध्या में रस नहीं, उद्यम नहीं, पराक्रम नहीं, परम देव का हृदय में नित्य सत्योपदेश सुनाई नहीं देता तो हम जड़ता से ग्रसित हैं।

१. वे सब अवतरण सुधासिन्धु 'आर्याभिविनय' प्रार्थना पुस्तक से लिये गये हैं ।

साभार-गंगा ज्ञान धारा

भ्रान्ति निवारक-महर्षि दयानन्द सरस्वती

डॉ. सुशील वर्मा

प्रजापति (ब्रह्माजी) ने अपनी ही दुहिता (सन्तान) से दुस्कर्म किया था इसलिए वह पूजनीय नहीं है। अर्थ में अनर्थ कर ऐसा दुस्प्रचार करना यह वेदादि ग्रन्थों का अपमान है। यही मानसिकता हमारी संस्कृति एवं परम्पराओं को विकृष्ट एवं उपहास का विषय बना देती हैं।

द्यौर्मे पिता जनिता नाभिरत्त
बधुमेमाता पृथिवी महीयान्।
उन्तानयोश्चम्बो र्योनिरन्तरत्ता पिता
दुहितुर्मभमाधात्।।

-ऋ० १/१६४/३३

यह कथा का मूल ऋग्वेद है। इस मन्त्र का मूल ऋग्वेद है। इस मंत्र का भाष्य स्वामी जी करते हैं द्यौ जो सूर्य का प्रकाश है सो सब सुखों का हेतु होने से मेरे पिता के समान और पृथिवी बड़ा स्थान और मान्य का हेतु होने से मेरी माता के तुल्य हैं जैसे ऊपर नीचे वस्त्र की दो चांदनी तान देते हैं अथवा आमने सामने दो सेना होती है। इसी प्रकार सूर्य और पृथिवी अर्थात ऊपर की चांदनी के समान सूर्य और नीचे के बिधाने के समान पृथिवी है। इसमें योनि अर्थात गर्भ स्थान का स्थान पृथिवी और गर्भ स्थापना करने वाला पति के समान मेघ है। वह अपने बिंदु रूप वीर्य के स्थापना से उसको गर्भाधान करने से औषध्यादि अनेक संतान उत्पन्न करता है कि जिनसे सब जगत का पालन करता है।

नवीन ग्रंथकारों ने यह कथा भ्रांति से मिथ्या करके लिखी है प्रजापति यहां रहते हैं सूर्य को जिसकी दो कन्या एक प्रकाश दूसरी उषा। क्योंकि जो जिससे उत्पन्न होता है वह उसका ही संतान कहाता है। इस उषा जो की तीन चार घड़ी रात्रि शेष रहने पर पूर्व दिशा में रक्तता दीख पड़ती है वह सूर्य के किरण से उत्पन्न होने के कारण उसकी कन्या कहलाती है। उनमें से उषा के सम्मुख जो प्रथम सूर्य की किरण जाके पड़ती है वही वीर्य स्थापन के समान है। उन दोनों ने समागम से पुत्र अर्थात दिवस उत्पन्न होता है।

शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ में प्रजापति और सविता सूर्य के नाम है।

प्रजापतिर्वै सुपर्णो गुरुत्मनिष
सविता।

-शतपथ १०/२/७/४

इसी प्रकार निसक्त ४/२१ के अनुसार।

तत्र पिता दुहितुर्ग भं दधाति पर्जन्यः प्रचिव्याः।।

पिता के समान पर्जन्य अर्थात जल रूप में मेघ है उसकी पृथिवी रूप दुहिता अर्थात कन्या है। क्योंकि पृथिवी की उत्पत्ति जल से ही है। जब वह उस कन्या में वृष्टि द्वारा जल रूप वीर्य को धारण करता है तब उससे गर्भ रहकर औषध्यादि अनेक पुत्र उत्पन्न होते हैं।

यह रूपकालंकार की कथा अच्छी प्रकार वेद ब्राह्मण और निरूक्तादि सत्य ग्रन्थों में प्रसिद्ध है। इनको ब्रह्मवैवर्त्त श्रीमद् भागवतादि मिथ्या ग्रन्थों में भ्रांति से बिगाड़ के लिख दिया है। इन्हें मन से त्याग के सत्य कथाओं को न भूले।

इसी प्रकार देवासुर संग्राम की कथा रूपकालंकर की है। इसे बिगाड़ कर प्रमादी लोगो ने प्रचार किया।

एक दैत्यों की सेना था जिनका शुक्राचार्य पुरोहित था वह दक्षिण देश में रह रहे थे दूसरी देवों की सेना थी। जिनका राजा इंद्र, सेनापति अग्नि और पुरोहित बृहस्पति था। इन देवों के विजय करने के लिए आर्यावर्त्त के राजा भी जाया करते थे। असुर लोग तप करके ब्रह्मा, विष्णु और महादेवादि से वर मांग लेते थे। उनके मारने के लिए विष्णु अवतार धारण करके पृथ्वी का भार उतारा करते थे।

स्वामी जी लिखते हैं कि यह सब पुराणों की गप्प व्यर्थ जानकार छोड़ देना और सत्य ग्रन्थों की कथा को ग्रहण करना। इंद्र और वृत्रासुर को भी आप देवासुर संग्राम रूप जानो। क्योंकि सूर्य की किरण देव संज्ञक और मेघ के अवयव अर्थात बादल असुर संज्ञक है।

निघण्टु आदि शास्त्रों में सूर्य देव और मेघ असुर करके प्रसिद्ध है। जो लोग विद्वान सत्यवादी सत्यमानी और सत्य कर्म करने वाले हैं। वे तो देव और जो अविद्वान झूठ बोलने और मानने वाले और मिथ्याचार करने वाले वे असुर कहते हैं। उनका परस्पर नित्य विरोध होना, यही अनेक युद्ध के समान है। इसी प्रकार मनुष्य का मन और ज्ञान इन्द्रिय भी देव कहाते हैं। उनमें राजा मन और सेना इन्द्रिय है। तथा सब प्राणों का नाम असुर है। और उनमें राजा प्राण और अपानादि सेना है। मन के विज्ञान बढ़ने से प्राणों का जय और प्राणों के बढ़ने से मन का विजय हो जाता है।

पुण्यात्मा मनुष्य देव और पापात्मा दुष्ट लोग असुर कहते हैं।

''विद्वाꣳसो हि देवाः''-शतपथ ३/७/६/१०

दिन का नाम देव और रात्रि का नाम असुर है इन सभी का परस्पर विरोध रूप युद्ध हो रहा है

शुक्ल पक्ष का नाम देव और कृष्ण पक्ष का असुर उत्तरायण की देव संज्ञा और दक्षिणायन की असुर संज्ञा है यह सब देव और असुर प्रजापति अर्थात पुत्र के समान कहे जाते हैं और संसार के सब पदार्थ इन्हीं के अधिकार में रहते हैं। इनमें से जो जो असुर अर्थात प्राण आदि हैं। वह ज्येष्ट कहते हैं। क्योंकि वह प्रथम उत्पन्न हुए हैं तथा बाल्यावस्था में सब मनुष्य भी विद्वान होते हैं तथा सूर्य ज्ञानेन्द्रिय और विद्वान आदि पक्ष प्रकाश होने से कनिष्ठ बोले जाते हैं।

इसी प्रकार कश्यप आदि कथा का विवेचन करते हुए लिखते हैं--

मरीची के पुत्र एक कश्यप ऋषि हुए हैं उनको दक्ष प्रजापति ने विवाह विधान से तेरह कन्याएं दी जिससे सारे संसार की उत्पत्ति हुई। दिति से दैत्य अदिति से आदित्य दनु से दानव कद्रू से सर्प और विनता से पक्षी तथा औरों से वानर ऋच्छ घास आदि पदार्थ भी उत्पन्न हुए। इसी प्रकार चन्द्रमा को सत्ताइस कन्या दी। इस प्रकार असंभव कथा लिख रखी है। यह सत्य कथा सत्य शास्त्रों में किस प्रकार की उत्तम लिखी है।

स यत्कूर्मो नाम। प्रजापति प्रजा उत्सृजत। यदसृजताकरोत्तद्य दकरोत्तस्मात्कूर्म्मः कश्यपो वै कूर्मास्तस्मादाहुः सर्वा प्रजाः काश्याय इति। शतपथ ७/५/१/५

प्रजा को उत्पन्न करने से कूर्म्म तथा उसको अपने ज्ञान से देखने के कारण परमेश्वर को कश्यप भी कहते हैं। 'कश्यप' शब्द 'पश्यक' से बनता है।

इसी प्रकार अन्य भ्रांतियां गया पुष्कर तीर्थ के विषय में सत्य कथाओं के द्वारा निवारण किया है। विस्तृत भ्रांतियां का निवारण जिस प्रकार से उद्धृत किए गए हैं। महर्षि दयानंद सरस्वती जी की अमर रचना ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के ग्रंथ प्रमाणयाप्रामाण्य विषय इन सभी संकाओं के समाधान हेतु उपयुक्त है। अतः हमें सत्य शास्त्रों से शिक्षा प्राप्त कर अपना मार्ग प्रशस्त करना चाहिए ना की अवैधिक रचनाओं के निकृष्ट तथा कथित ग्रन्थों द्वारा।

साभार-ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका।

पृष्ठ ५ का शेष.....

कि वेद का संहिता भाग जैसा प्रामाणिक है ब्राह्मण भाग भी वैसा ही प्रामाणिक है अथवा नहीं? और मनुस्मृति धर्मशास्त्र के समान अन्य स्मृतियाँ मानने योग्य हैं अथवा नहीं। पृ. ६३९

उत्तर- इस प्रकार बहुत-सी युक्तियों से यह बात सिद्ध होती है कि संहिता के समान ब्राह्मण भाग तथा मनुस्मृति समान विष्णु याज्ञवल्क्य आदि समस्त स्मृतियाँ मानने योग्य हैं तथा यही सब पण्डितों का सर्वसम्मत मत है। पृ. ६४१

प्रश्न २- पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न ने दूसरा प्रश्न यह किया कि शिव, विष्णु, दुर्गा आदि देवताओं की मूर्तियों की पूजा और मरणोपरान्त पितरों का श्राद्ध आदि और गंगा, कुरुक्षेत्र आदि तीर्थों व क्षेत्रों में स्नान तथा वास, शास्त्र के अनुसार उचित है अथवा अनुचित ? पृ. ६४१ उत्तर- अतः देवताओं की मूर्ति और उनकी पूजा करना सब हुलियें और स्मृतियों के अनुसार उचित है। पृ. ६४५

अतः यह बात सुस्पष्ट होकर निर्णीत हो गई कि मृतकों का श्राद्ध स्मृति दोनों के अनुसार विहित है। पृ. ६४६ और स्मृति

अतः गंगा आदि का स्नान और कुरुक्षेत्र आदि का वास श्रुति दोनों से सिद्ध है। पृ. ६४६ प्रश्न ३- पं. महेशचन्द्र न्यायरत्न ने तीसरा प्रश्न यह किया कि अग्नि इत्यादि मन्त्र में अग्नि शब्द से परमात्मा अभिप्रेत है अथवा आग? पृ. ६

उत्तर- अतः इस मन्त्र में अग्नि शब्द का अर्थ जलाने वाली आग ही है। पृ . ६४७

प्रश्न ४- पं. महेशचन्द्र न्यायरत्न जी ने चौथा प्रश्न यह किया कि अग्निहोत्र इत्यादि यज्ञ करने का प्रयोजन (उद्देश्य) जल, वायु की शुद्धि है अथवा स्वर्ग की प्राप्ति ? पृ. ६४७

उत्तर- यजुर्वेद के मन्त्रों से अग्निहोत्र आदि यज्ञ स्वर्ग-साधक हैं। पृ. ६४७ प्रश्न ५- पं. महेशचन्द्र जी ने पाँचवाँ प्रश्न यह किया कि वेद के ब्राह्मण भाग का निरादर करने से पाप होता है अथवा नहीं? पृ. ६४७

उत्तर- इसका उत्तर देते हुए पं. सुब्रह्मण्यम शास्त्री ने कहा कि यह तो प्रथम प्रश्न के उत्तर में कह चुके हैं कि ब्राह्मण भाग भी वेद ही हैं, फिर ब्राह्मण भाग का अपमान करने से मानो वेद का ही अपमान हुआ।.... पृ. ६४७

उसके पश्चात् पण्डितों की सम्मति लेनी आरम्भ हुई। निम्नलिखित पण्डितों ने सर्वसम्मति से हस्ताक्षर कर दिये। पृ. ६४८ इन प्रश्नों में दूसरा प्रश्न मूर्तिपूजा से सम्बन्धित है। इसमें सुब्रह्मण्यम शास्त्री ने मूर्ति-पूजा के समर्थन में ऋग्वेद के मन्त्र का उल्लेख करके बताया- शिवलिङ्ग की पूर्ति की पूजा स्थापना आदि से पूजन का फल होता है, मन्त्र है-

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र यत्ते जनिम चारु चित्रम्।।

- ऋग्वेद ५/३/३

उसके अतिरिक्त रामतापनी, बृहज्जाबाल उपनिषद् में शिवलिंग की पूजा करना लिखा है। मनुस्मृति में लिखा है-

नित्यं स्नात्वा शुचिः कुर्याद्देवर्षिपितृतर्पणम्।
देवताभ्यर्चनं चैव समिदाधानमेव च।।

- मनु. २/१७६

इसके अतिरिक्त देवल स्मृति, ऋग्वेद गृह्य परिशिष्ट बौधायन सूत्र आदि के प्रमाण दिये हैं।

इन प्रमाणों के उत्तर में लेखक ने स्वामी दयानन्द का जो पक्ष रखा है, उसका मुख्य आधार है- वेद स्वतः प्रमाण हैं और शेष ग्रन्थ परतः प्रमाण हैं, अतः उनकी प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध नहीं है। फिर भी जिन प्रमाणों को दिया गया है, वह प्रसंग मूर्ति-पूजा पर घटित नहीं होता। स्वामी दयानन्द ने सामवेद के ब्राह्मण के पाँचवें अनुवाक के दसवें खण्ड में स्पष्ट लिखा है- सपरन्दिवद्र आदि यहाँ देवताओं की मूर्ति का प्रसंग ब्रह्मलोक का है। पृ. ६४३

मूर्तिपूजा के पक्ष में प्रमाण देते हुए मनु को उद्धृत किया है और कहा गया है- दो ग्रामों के मध्य मन्दिरों का निर्माण करना चाहिए तथा उसमें प्रतिमा स्थापित की जानी चाहिए-

सीमासन्धिषु कार्याणि देवतायतनानि च। - ८/२४८
संक्रमध्वजयष्टीनां प्रतीमानां च भेदकः । प्रतिकुर्याच्च तत् सर्वं पंच दद्याच्छतानि च ।।

९/२८५ मूर्तिपूजा के समर्थन में दिये गये तर्कों पर लेखक ने स्वामी दयानन्द का पक्ष निम्न प्रकार से उपस्थित किया है-

स्वामी दयानन्द जिन शास्त्रों का प्रमाण मूर्तिपूजा के खण्डन में देते हैं, मूर्तिपूजा का समर्थन करनेवालों को उन्हीं शास्त्रों से मूर्तिपूजा के समर्थन के प्रमाण देने चाहिएँ जो नहीं दिये गये।

ऋग्वेद के जिस मन्त्र का अर्थ शिवलिंग की स्थापना किया है, वह मर्जयन्त शब्द मृज धातु से बना है जिसका अर्थ शुद्ध करना, पवित्र करना, सजाना, शब्द करना है, अतः इसका अर्थ पूजा करना कभी नहीं है, अपितु परमेश्वर की स्तुति करना है।

जो गाँव की सीमा में देवताओं के मन्दिर बनाने का विधान है, इसी प्रसंग में सीमा पर तालाब, कूप, बावड़ी आदि के वाचक शब्दों का प्रयोग किया गया है, अतः मन्दिर की बात नहीं है। उत्तरकाल में इन स्थानों पर मन्दिर बनने लगे, वह शास्त्र- विरुद्ध परम्परा है।

अन्त में मूर्ति पूजा वेद विरुद्ध है, इसको बताने के लिए वेद मन्त्रों के प्रमाण दिये गये हैं।

मूर्तिपूजा के निषेध में प्रमाण- अतः उपर्युक्त युक्तियों से यह तो भली- भाँति निश्चित हो गया कि मूर्ति-पूजा उचित नहीं और अब उसके खण्डन में वेदों तथा उपनिषदों के कुछ प्रमाण देकर इस विषय को समाप्त करते हैं-

"न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।" अर्थ- उस परमात्मा की कोई प्रतिमा नहीं, उसका नाम अत्यन्त तेजस्वी है। स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।

अर्थ- वह परमात्मा सर्वव्यापक, सर्वद्रष्टा, सर्वशक्तिमान्, शरीररहित, पूर्ण, नस-नाड़ी के बन्धन से रहित, शुद्ध है तथा पापों से पृथक् है

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसंभूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः।।

अर्थ - जो लोग प्रकृति आदि जड़ पदार्थों की पूजा करते हैं, वे नरक में जाते हैं तथा जो उत्पन्न की हुई वस्तुओं की पूजा करते हैं वे इससे भी अधिक अन्धकारमय नरक में जाते हैं।

तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्। जो बुद्धिमान् उसे आत्मा में स्थित देखते हैं, उन्हीं को शाश्वत सुख प्राप्त होता है, औरों को नहीं ।

ततो तदुत्तरतरं तदरूपमनामयम्।
य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्त्यथेतरे दुःखमेवापि यान्ति।।

जो सृष्टि व सृष्टि के उपादान कारण से उत्कृष्ट है, वह निराकार व दोषरहित है। जो उसको जानते हैं, उनको अमर जीवन प्राप्त होता है और दूसरे लोग केवल दुःख में फँसे रहते हैं।

तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति, नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।

अर्थ- उसी के ज्ञान से मृत्यु के पजे से छुटकारा होता है और कोई मार्ग ध्येय धाम का नहीं है।

किसी देवता की उपासना भी उचित नहीं है। शतपथ ब्राह्मण में जहाँ तैंतीस देवताओं की व्याख्या की है (और उन्हीं तैंतीस के आज तैंतीस करोड़ बन गये हैं और उस सूची के पूरा होने के पश्चात् जो उसमें और गोगा पीर जैसे समय-समय पर सम्मिलित होते रहे हैं, वे इनसे अतिरिक्त हैं) वहाँ भी परमात्मा के अतिरिक्त किसी अन्य की पूजा विहित नहीं रखी, प्रत्युत उसका खण्डन किया है। आत्मेत्येवोपासीत । स योऽन्यमात्मनः प्रियं ब्रुवाणं ब्रूयात्प्रियं रोत्स्यतीश्वरो ह तथैव स्यात् ।

योऽन्यां देवतामुपास्ते न स वेद । तथा पशुरेव स देवानाम् ।

परमेश्वर जो सबका आत्मा है, उसकी उपासना करनी चाहिये। जो परमेश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य को प्यारा अर्थात् उपास्य समझता है, उसे जो कहे कि तू प्रिय के विरह में दुःख में पड़ेगा, वह सत्य पर है। जो और देवता की उपासना करता।

ऋषि और आचार्य के लक्षण

पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

हर किसी को महापुरुष, आचार्य वा ऋषि नहीं कहा जा सकता, वा माना जा सकता है। अज्ञ जनता में इन शब्दों का दुरुपयोग वा मिथ्या प्रयोग होते प्रायः देखा जाता है। शास्त्र तो 'साक्षात्कृतधर्मा' जिसे धर्म का साक्षात्कार हो, उसे ही 'ऋषि' कहता है। जिसको जिस विषय का साक्षात् ज्ञान है, वह उस विषय का ऋषि कहाता है। वैदिक साहित्य में तो 'ऋषिर्दर्शनात् स्तोमान् ददर्श' (निरुक्त २।११) मन्त्रार्थद्रष्टा को ऋषि है। संसार को मार्ग दर्शानेवाले को ऋषि कहते हैं। महामुनि पतंजलि महाभाष्य में 'ऋषिर्वेदे पठति शृणोत ग्रावाणः' में 'ऋषिर्वेदः' वेद को ही ऋषि बतलाते हैं।

आचार्य' शब्द यद्यपि ऋग्वेद, यजुः, साम तीनों में नहीं पाया। वेद ११।५ ब्रह्मचर्यसूक्त में 'आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्त' (अथर्व. ११।५।३) 'आचार्य' का जो निरूपण किया गया है, उसके आधार पर ही सभी धर्मशास्त्रों ने आचार्य का लक्षण प्रायः समान ही किया है -

उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः।
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्य प्रचक्षते।।
(मानवधर्म शास्त्र २।१४०)

इसका यही अभिप्राय है कि जो ८ वर्ष से लेकर कम से कम २५ वर्ष की आयु तक बालक के आचार-व्यवहार तथा उसके समस्त ज्ञान-विज्ञान का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले, संकल्प और सरहस्य वेद का अध्ययन करावे, वही 'आचार्य' कहाता है।

निरुक्तकार यास्कमुनि ने भी 'आचार्य' का लक्षण निम्न प्रकार किया है -

आचार्यः कस्मात् आचारं ग्राहयति, आचिनोत्यर्थान्। आचिनोति बुद्धिमिति वा।। (निरुक्त अ० १।४)

जिसका भाव भी यही है, जो ऊपर कहा गया है। नवीन युग वा नव भारत के निर्माता ऋषि दयानन्द 'आचार्य' का लक्षण करते हैं -

"आचार्य उसको कहते हैं, जो साङ्गोपाङ्ग वेदों के शब्द, अर्थ, संबंध और क्रिया का जाननेहारा, छल-कपट रहित, अतिप्रेम से सबको विद्या का दाता, परोपकारी, तन-मन और धन से सबको सुख बढ़ाने में जो तत्पर, महाशय, पक्षपात किसी का न करे और सत्योपदेष्टा, सबका हितैषी, धर्मात्मा, जितेन्द्रिय हो" (संस्कारविधि, उपनयन संस्कार)।

'आचार्य' पदवी कितनी पवित्र, उच्च, उत्तरदायित्वपूर्ण है, यह पाठक स्वयं विचार सकते हैं। सुगन्ध वह है, जिसे नासिका इन्द्रिय कहे, न कि वह जो उसका बेचनेवाला कहे। इसी प्रकार 'आचार्य' की सुगन्ध उसके अपने जीवन से ही मिलती है, न कि स्वयं कहने से या कहलाने से।

उपयुक्त लक्षणों से युक्त आचार्य और ऋषि ही मानव-जाति को ऊंचा उठा सकते हैं। ऐसे महापुरुषों के विना मानवीय जीवनरूपी नौका निर्दिष्ट वा अभीष्ट स्थान पर पहुंचेगी, इसमें सन्देह ही बना रहेगा। अतएव मानवीय जीवन की सफलता वा लक्ष्यपूत्ति का एकमात्र साधन ऋषियों द्वारा निर्दिष्ट (आर्ष) मार्ग वा प्रणाली का अवलम्बन है। मानव-समाज सदा ही दुःख-अशान्ति-परस्पर विरोध-विद्वेष-स्वार्थपरता परहितहानि और विक्षुब्धता की भावनाओं से निरन्तर ओत-प्रोत रहेगा, जब तक ऋषियों द्वारा निर्दिष्ट आर्ष मार्ग वा प्रणाली का आश्रयण नहीं करेगा, क्योंकि 'सत्यं वै देवाः, अनुतं मनुष्याः' (शतपथ) देव, ऋषि लोग ही पूर्णज्ञानी, निरपेक्षसत्यनिष्ठ, निरीह, सर्वकाल परहित में रत होते हैं, मनुष्य में तो कुछ न कुछ न्यूनता बनी ही रहेगी। ये सब भाव 'ऋषि' और 'आचार्य' शब्दों में अन्तनिहित हैं, यही हमको कहना है।

साभार ग्रन्थ-जिज्ञासु रचना मंजरी

आवश्यक सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ द्वारा पंजीकृत समस्त आर्य समाजों को निर्देशित किया जाता है। सभा द्वारा जारी विवाह प्रमाण पत्रों में जारी किये गये प्रमाण पत्रों की "सभा प्रति" सभा कार्यालय में अतिशीघ्र जमा करा दें।

-कार्यालय अधीक्षक
आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र., लखनऊ

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२२४१/५७ -आर्यमित्र २३ एवं ३० नवम्बर, २०२३ पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४/२०१६-२१ एक प्रति ₹ ५.००

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९४१५३६५५७६, सम्पादक-९४५१८८१९७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,

.....

.....

.....

मंडल स्तरीय आर्य महासम्मेलन राजकीय गंगा मेला तिगरी, अमरोहा सउल्लास सम्पन्न

महर्षि दयानन्द सरस्वती की २००वीं जन्म जयन्ती के पवित्र अवसर पर जिला आर्य प्रतिनिधि सभा अमरोहा एवं आर्य समाज मोह, कोट आदि के सहयोग से आयोजित मंडल स्तरीय आर्य महा सम्मेलन व राजकीय गंगा मेला तिगरी अमरोहा दिनांक २४ नवम्बर से २७ नवम्बर, २०२३ को उल्लास पूर्वक सम्पन्न हुआ।

दिनांक २५ नवम्बर, २०२३ के समारोह के मुख्य अतिथि आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा जी, अतिविशिष्ट अतिथि श्रीमती शशी जैन, अध्यक्ष नगर पालिका परिषद अमरोहा, विशिष्ट अतिथि डॉ० अशोक कुमार आर्य जी प्रतिष्ठित सदस्य आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र०., श्रीमती कमलेश सिंह जी, प्रबन्धक पाईनवुड पब्लिक स्कूल अमरोहा, श्री ठाकुर सिंह जी, अन्तरंग सदस्य आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. थे।

कार्यक्रम में आमंत्रित अतिथिगण एवं विद्वान स्वामी अखिलानन्द सरस्वती, पूठ, श्री तृषपाल सिंह आर्य बागपत, श्री पुष्पेन्द्र कुमार शास्त्री, श्री सोमेश शास्त्री, मा. श्री ललित तंवर, अध्यक्ष जिला पंचायत अमरोहा, मा. श्री भंवर सिंह तंवर, पूर्व सांसद मा. श्री हरि सिंह ढिल्लो सदस्य विधान परिषद उ.प्र., मा. श्री महेन्द्र सिंह खड़गवंशी जी, विधायक हसनपुर, मा. श्री राजकुमार सैनी जी, अध्यक्ष नगर पालिका परिषद हसनपुर, मा. श्री राजीव तरारा, विधायक धनौरा आदि थे।

समारोह के संयोजक श्री हेतराम सागर थे। सर्वश्री ओमपाल आर्य, प्रधान विनय त्यागी, मंत्री, यशवन्त सिंह, कोषाध्यक्ष, शक्ति कुमार अग्रवाल, मनोहर लाल आर्य, नत्थू सिंह आर्य, देवेन्द्र कुमार रस्तोगी, निरंकार सिंह, मा. अमीचन्द्र, प्रेम सिंह, होराम सिंह आदि की गरिमामई की उपस्थिति रही।

महर्षि दयानंद सरस्वती जी की जयंती के उपलक्ष में जिला आर्य प्रतिनिधि सभा बिजनौर द्वारा आर्य महासम्मेलन का आयोजन

महर्षि दयानंद सरस्वती जी की २००वीं जन्म जयंती के पवित्र अवसर पर जिला आर्य प्रतिनिधि सभा बिजनौर द्वारा आर्य महासम्मेलन का भव्य आयोजन दिनांक १, २ एवं ३ दिसंबर २०२३ को किया गया है।

समारोह के मुख्य अतिथि आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्रपाल वर्मा-अध्यक्ष, श्री रावेन्द पाल आर्य प्रधान जिला सभा बिजनौर विशिष्ट अतिथि, श्री भूपेंद्र सिंह (बॉबी) जिला अध्यक्ष भाजपा बिजनौर होंगे।

कार्यक्रम में स्वामी सूर्यवेश जी, श्री हरिप्रकाश शास्त्री, डॉ. मंजू चौधरी, श्रीमती कविता चौधरी, श्री ज्ञानेश्वर तिवारी, परियोजना निदेशक बिजनौर, डॉ. दीपेंद्र सिंह, डॉ. बीरबल सिंह, श्री मांगे राम चौहान-एस.डी.एम. न्यायिक बिजनौर, श्री विजय गोयल आर्य आदि को आमंत्रित किया गया है।

समारोह में प्रातः ६:३० बजे से ९:३० बजे तक योग देव यज्ञ आदि सायं २:०० बजे से ५:०० बजे तक विविध सम्मेलन होंगे। दिनांक १ दिसंबर २०२३ को प्रातः १०:०० बजे से विशाल शोभा यात्रा निकाली जाएगी।

सभी धर्म प्रेमी नर-नारियों से निवेदन है कि इस पुनीत अवसर पर पधार कर समारोह को सफल करें तथा वैदिक विद्वानों के वचनामृत का पान कर मनुष्य जीवन सार्थक बनावे।

संपर्क सूत्र-९८९७६८०४०५, ९४५६२४६१०८, ९७५६६८५१३९, ८४४५८९२२६०

शांति यज्ञ एवं श्रद्धांजलि सभा का आयोजन

आर्य समाज दौराला मेरठ के प्रधान चौधरी राजपाल सिंह आर्य का देहांत दिनांक १४ नवंबर २०२३ को हो गया था। उनकी स्मृति में शांति यज्ञ एवं श्रद्धांजलि सभा का आयोजन दिनांक २० नवंबर २०२३ को उनके निज निवास दौराला मेरठ में किया गया।

यज्ञ के ब्रह्मा पं० रणधीर शास्त्री थे, शांति यज्ञ के पश्चात आर्य जनों, गणमान्य व्यक्तियों व संबंधियों ने अपने-अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किए। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्र पाल वर्मा ने स्वर्गीय चौधरी राजपाल सिंह आर्य को महर्षि का सच्चा अनुयाई व निडर कार्यकर्ता बताया। आर्य समाज के प्रचार प्रसार में वह सदैव अग्रणी रहते थे। सभा के उप प्रधान श्री हरवीर सिंह सुमन ने स्व० राजपाल सिंह को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि आर्य समाज भवन का जीर्णोद्धार व भव्य यज्ञशाला निर्माण में सहयोग के लिए उन्हें सदैव याद किया जाएगा।

श्री मल्लू सिंह आर्य कन्या इंटर कालेज के संयोजक के रूप में भी उन्होंने अविस्मरणीय कार्य किया।

सर्वश्री रामपाल सिंह, नरेंद्र सिंह एडवोकेट, डॉ. आर.पी. सिंह, संजीव चौधरी, चौ. महिपाल सिंह, राम सिंह जाखड़, अंकुश चौधरी, सुरेंद्र सिंह आदि ने भी श्रद्धांजलियां अर्पित कीं।

आर्य समाज चांदपुर का 113वाँ वार्षिकोत्सव का भव्य समापन

आर्य समाज चांदपुर जनपद बिजनौर का १५३वाँ वार्षिक उत्सव दिनांक २१ नवंबर २०२३ को भव्यता पूर्वक संपन्न हुआ।

समारोह के मुख्य अतिथि आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्रपाल वर्मा जी थे। आमंत्रित विद्वतगण आचार्य शुचि सद्मुनि जी पंडित कुलदीप आर्य जी, पंडित मोहित शास्त्री जी थे। अन्य सहयोगीजन सर्व श्री भोजराज भाटिया, प्रेम आर्य, अरविंद बंसल, देवराज भगत, संजीव बंसल आदि थे।

कार्यक्रम में डॉ. एस.एस. मिश्रा, सर्वश्री लक्ष्मी नारायण, मनोज भाटिया, अरुण कथोरिया, सुबोध गुप्ता, सर्व श्रीमती कमल बंसल, रेखा अग्रवाल, मधु अग्रवाल, प्रिया भाटिया आदि की गरिमामई उपस्थिति रही। समारोह के संयोजक श्री अतुल भाटिया मंत्री आर्य समाज चांदपुर थे। अंत में सभी अतिथियों को धन्यवाद श्री उमेश गोयल प्रधान आर्य समाज चांदपुर ने दिया।

शोक समाचार

आर्य जगत के उच्च कोटि के विद्वान वयोवृद्ध सन्यासी महर्षि दयानंद के सिद्धांतों के प्रति समर्पित स्वामी श्रद्धानंद सरस्वती जी का १०४ वर्ष की दीर्घायु में दिनांक १६ नवंबर २०२३ को आर्य समाज साशनी गेट, अलीगढ़ में देहावसान हो गया।

स्वामी श्रद्धानंद की मृत्यु से आर्य समाज को गहरा आघात लगा है। ईश्वरी इच्छा व परमेश्वर के नियम अटल हैं। स्वामी जी की रिक्तता अपूर्णनीय है।

● आर्य समाज डालीगंज लखनऊ के कोषाध्यक्ष डॉ. अरविंद नाथ पांडे जी का दिनांक १३ नवंबर २०२३ को प्रातः देहांत हो गया। स्व. पांडे जी काफी दिनों से रुग्ण चल रहे थे।

स्व. अरविंद नाथ पांडे जी के निधन से आर्य समाज ने एक सक्रिय व ऋषि के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने वाले समर्पित कार्यकर्ता को असमय खो दिया। जिसकी भरपाई असंभव है। ईश्वर सद्गति प्रदान करें एवं परिजनों को यह असहनीय वेदना सहन करने की शक्ति दे।

● आर्य समाज कुतुब नगर, सीतापुर के प्रधान श्री रामचन्द्र गुप्ता का आकस्मिक निधन दिनांक २५ नवम्बर, २०२३ को हो गया। उनका अन्तिम संस्कार दिनांक २६ नवम्बर, २०२३ को वैदिक रीति से तमाम परिजनों व आर्यजनों की उपस्थिति में किया गया।

स्व. रामचन्द्र गुप्ता के निधन से आर्य समाज की अपूर्णीय क्षति हुई है जिसकी पूर्ति होना असम्भव है वह सच्चे अर्थों में महर्षि के सिद्धांतों के प्रचारक व कार्यकर्ता थे।

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्रपाल वर्मा एवं समस्त सहयोगी पदाधिकारी गण दिवंगत आत्माओं के मोक्ष हेतु ईश्वर से प्रार्थना करते हुए अपनी भावपूर्ण श्रृद्धांजलियाँ अर्पित की हैं।

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।